श्री देवाराधना संग्रह

श्री १०५ ऐलक कीर्तिसागर जी महाराज

के कर कमलो मे चतुर्मास की स्मृति मे

श्री रामस्वरूपजी कुर्तिया

मो, की धर्मपत्नी की ओर से सादर सप्रेम भेट

सकलनकर्ता एव प्रकाशक

शान्तिकुमार जैन "साहित्यरत्न"

प्रथमावृति १००० | विक्र० स० २०२१ वीर वि० सं० २४९० | मूल्य देवाराधना

दो शब्द

प्रस्तुत श्री देवाराधना संग्रह श्री १०५ ऐलक श्री कीर्तिसागरजी, ब्रह्मचारी श्री गेदालालजी, ब्रह्मचारी श्यामलालजी ब्र० छोटेलालजी, व श्री कुंअरपालजी के चतुर्मास की पुण्य स्मृति मे प्रकाशित कराई गई है। इसमे सभी प्रकार की सामग्री का समावेश है। हस्तलिखित श्री निर्माण क्षेत्र पाठ प्रकाशित कराया गया। पुस्तक अधिक उपयोगी बनाने के लिये कई पुस्तको से सामग्री संकलित की गई है। जो प्रात: से शाम तक आराधना क्रियाओ तथा पर्वो एवं तीर्थो के पूजन व अर्घो से सज्जित है।

अनेको व्यवधानों के कारण पुस्तक प्रकाशन मे अत्याधिक विलंब हुआ है। इसके लिये मुझे अत्यन्त खेद है। जिन जिन दातारों के सहयोग से यह पुस्तक प्रकाशित हुई है उनके नाम मुख पृष्ठ पर प्रकाशित हैं। तथा उन दातारों की दान शीलता से आराधक लाभान्वित तथा आत्म कल्याणकारी होंगे।

विषय वासनाओं में लिप्त तथा भौतिक युग से उत्पीडित जन-समुदाय आत्म शान्ति प्राप्त करें। तथा पाप मार्ग त्याग कर पुण्य मार्ग की ओर अग्रसरित हों। यही मेरी कामना है।

शान्तिकुमार जैन

प्रकाशक:—
शांतिकुमार जैन
मौ, भिण्ड

विषयानुक्रमणिका

क्रमांक	विषय	पृष्ठ सख्या
१	दर्शन विधि	१
२	दर्शन पाठ	१
३	मगल पाठ	१
४	वर्तमान कालिक २४ तीर्थंकरो के नाम	२
५	भूत कालिक २४ तीर्थंकरों के नाम	२
६	भविष्यत कालिक २४ तीर्थंकरों के नाम	२
७	बीस विद्यमान विदेह क्षेत्र तीर्थंकरों के नाम	२
८	दर्शन पाठ (बुधजन कृत)	३
९	पच मंगल	३
१०	अभिषेक पाठ	१२
११	विनय पाठ	१२
१२	नित्य नियम पूजा	१४
१३	देव शास्त्र गुरु पूजा (प. हुकुम चंद न्याय तीर्थ)	१८
१४	देव शास्त्र गुरु पूजा (युगल, एम. ए.)	२७
१५	तीस चौबीसी पूजा	३६
१६	श्री बीस तीर्थंकर पूजा	४३
१७	अकृत्रिम चैत्यालयो के अर्घ	४६
१८	सिद्ध पूजा द्रव्याष्टक	४८
१९	सिद्ध पूजा भाषा	५२
२०	समुच्चय चौबीसी जिनपूजा	५६
२१	रविव्रत पूजा	६०
२२	श्री वीर निर्वाण दीपावली पूजा	६४

तपो मूर्ति श्री १०८ मुनिराज विमलसागर जी महाराज

आप जैन साधु और त्यागियों मे एक उज्वल सूर्य हैं। आपके त्याग और तप से प्रभावित होकर जैन समाज मे कई त्यागी वृन्द दृष्टिगोचर हो रहे हैं तथा धर्म प्रेमियो के हृदय मे धर्म की अमिट छाप आपने पैदा कर दी है।

दर्शन पाठ नित्य पूजादि संग्रह

१—दर्शन विधि

प्रात:काल उठकर स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहिन चावल, लौंग आदि सामिग्री घर से लेकर पृथ्वी को देखता हुआ मन्दिरजी मे प्रवेश करे। पैर धोय वेदी-गृह मे ॐ जय जय जय नि:सहि नि.सहि शब्द उच्चारण करता हुआ भगवान् के निकट साष्टांग नमस्कार करे। नमस्कार मन्त्र आदि बोले। स्तुति पाठ करके लाई हुई सामिग्री मन्त्र बोलकर चढाये।

२—दर्शन पाठ (नमस्कार मन्त्र)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वेसाहूणं ॥१॥

३—मंगल पाठ

चत्तारि मङ्गलं, अरहन्तामङ्गलं, सिद्धामङ्गलं।
साहु मङ्गलं, केवली पण्णत्तो धम्मो मङ्गलं ॥
चत्तारि लोगुत्तमा, अरहन्तालोगुत्तमा सिद्धालोगुत्तमा।
साहु लोगुत्तमा, केवली पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा ॥

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहन्तासरणं पव्वज्जामि,
सिद्धासरणं पव्वज्जामि, साहु सरण पव्वज्जामि केवली
पण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ॥

ॐ नमोऽर्हते भगवते नम

४—वर्तमान २४ तीर्थंकरों के नाम

सर्वश्री आदिनाथ, अजितनाथ, सम्भवनाथ, अभिनन्दननाथ
सुमतिनाथ, पद्मप्रभु, सुपार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभु, पुष्पदन्त, शीतलनाथ, श्रेयासना
वासुपूज्य, विमलनाथ, अनन्तनाथ, धर्मनाथ, शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अर
नाथ, मल्लिनाथ, मुनिसुव्रतनाथ, नमिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वना
महावीर स्वामी।

५—भूतकाल २४ तीर्थंकरों के नाम

निर्वाण, सागर, महासाधु, विमलप्रभु, श्रीधर, सुदत्त, अमलप्र
उद्धर, अङ्गिर, सम्मति, सिन्धु, कुसुमाजलि, शिवगण उत्साह, ज्ञानेश्व
परमेश्वर, विमलेश्वर, यशोधर, कृष्ण, ज्ञानमति, शुद्धमति, श्रीभद्र, अ
ञात।

६—भविष्यत काल २४ तीर्थंकरों के नाम

महापद्म, सुरदेव, सुपार्श्व, स्वयप्रभु सर्वात्मभूत, देवपुत्र, कुलपु
उदङ्क, प्रौष्टिल, जयकीर्ति, मुनिसुव्रत, अर, निष्पाप, निष्काय विपु
निर्मल, चित्रगुप्त समाधिगुप्त, स्वयप्रभु, अनुवृ[illegible]क, जय, विमल, देवपा
अनन्त वीर्य।

७—बीस विहरमान के नाम

श्री सीमन्दर, जुगमन्दर, बाहु, सुबाहु, सजानक, स्वयप्र
ऋषभानन, अनन्तवीर्य, सूरिप्रभु, विशाल कीर्ति, वज्रधर, चन्द्रान
चन्द्रबाहु, ईश्वर, नेमीश्वर, वीरसेन, महाभद्र, भुजङ्गम, देवयश, अजितवी
जी को नमस्कार।

८- बुधजन कृत (दर्शन पाठ)

प्रभू पतित पावन मैं अपावन चरण आयो शरण जी।
यों विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरन जी ॥
तुम ना पिछान्यो आन मान्यो, देव विविध प्रकार जी।
या बुद्धि सेती निज न जान्यो, भ्रम गिन्यो हितकार जी ॥१॥
भव विकट वन मे करम वैरी, ज्ञान धन मेरो हर्यो।
तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिर्यो ॥
धन घडी यो धन दिवस योही धन जन्म मेरो भयो।
अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभूजी को लख लयो ॥२॥

छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासा पै धरै।
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुणयुत, कोटि रवि छवि को हरै ॥
मिट गयो तिमिर मिथ्यात्व मेरो, उदय रबि आतम भयो।
मो उर हरष ऐसो भयो, मनु रङ्क चिन्तामणि लयो ॥३॥

मैं हाथ जोड नवाय मस्तक, बीनऊं तुम चरण जी।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोक पति जिन, सुनहु तारन तरन जी ॥
जाचूं नही सुरवास पुनि, नर राज, परिजन साथ जी।
'बुध जाचहूं तुम भक्ति भव-भव, दीजिये शिवनाथ जी ॥४॥

९–अथ पँच मंगल

पणविधि पच परमगुरु, गुरु जिन सासनो।
सकल सिद्धिदातार, सुविघन विनासनो ॥
सारद अरु गुरु गौतम, सुमति प्रकासनो।
मगल कर चउ संघहि, पाप पणासनो ॥

पापहि पणासन गुणहि गरुआ, दोष अष्टादश-रहिउ।
धरि ध्यान करम विनासि केवल-ज्ञान अविचल जिन लहिउ ॥

प्रभु पञ्च कल्याणक विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं ।
त्रैलोक्यनाथ सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥१॥

१०—गर्भ कल्याणक

जाके गर्भ कल्याणक, धनपति आइयो ।
अवधिज्ञान—परमान, सुइन्द्र पठाइयो ॥
रचि नव बारह योजन, नयरि सुहावनी ।
कनकरयणमणि मँडित, मन्दिर अति बनी ॥

अति बनी पौरि पगारँ, परिखा, सवन उपवन सोहये ।
नर-नारि सुन्दर चतुर भेख सु, देख जनमन मोहये ॥
तह जनकगृह छह मास प्रथमहिं, रतनधारा बरसियो ।
पुनि रुचिक वासिनि जननि सेवाकरहिं, सबविधि हरसियो ॥२॥

सुरकुञ्जरसम कुञ्जर, धवल धुरन्धरो ।
केहरि-केशर शोभित, नख सिख सुन्दरो ॥
कमलाकलश-न्हवन दुइ दाम सुहावनी ।
रवि शशि मण्डल मधुर, मीन जुग पावनी ॥

पावनि कनक घट जुगम पूरन, कमलकलित सरोवरो ।
कल्लोलमाला कुलितसागर, सिंहपीठ मनोहरो ॥
रमणीक अमर विमान फणिपति, भुवन रवि छवि छाजई ।
रुचि रतनराशि दिपन्त, दहन सुतेज पुंज विराजई ॥३॥

ये सखि सोलह सुपने सूती सयन ही ।
देखे माय मनोहर, पच्छिम रयन ही ।
उठि प्रभात पूछियो, अवधि प्रकाशियो ।
त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहु भासियो ॥

भासियो फल तिहिं चिन्त दम्पति परम आनन्दित भये ।
छहमासपरि नवमास पुनि तह, रैन दिन सुखसो गये ॥

गर्भावतार महन्त महिमा, सुनत सब सुख पावही।
भणि "रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मंगल गावही॥४

११—जन्म कल्याणक

मतिश्रुत अवधि विराजित, जिन जब जनमियो।
तिहु लोक भयो छोभित, सुरगन भरमियो॥
कल्पवासि घर घंट, अनाहद वज्जियो।
जोतिषघर हरिनाद, सहज गल गज्जियो॥

गज्जियो सहजहि सङ्ख भावन-भवन सवद सुहावने।
वितरनिलय पटु पटह बज्जहि, कहत महिमा क्यों बने॥
कपित सुरासन अवधिबल जिन, जन्म निहचै जानियो।
धनराज तब गजराज माया-मयी निरमय आनियो॥५॥

जोजन लाख गयन्द, वदन सौ निरमये।
बदन बदन वसुदन्त, दन्त सर संठये॥
सरवर-सो पनबीस, कमलिनी छाजही।
कमलिनि कमलिनि कमल पचीस विराजही॥

राजही कमलिनी कमलऽठोतर सौ मनोहर दल बने।
दल दलहिं अपछर नटहिं नवरस, हाव भाव सुहावने॥
मणि कनक किंकण वर विचित्र, सु अमर मण्डप सोहये।
धनघंट चवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहये॥६॥

तिहि करि हरि चढ़ि आयउ, सुरपरिवारियो।
पुरहि-प्रदच्छन देत्रय, जिन जयकारियो॥
गुप्त जाय जिन-जननिहिं सुखनिद्रा रची।
मायामयि शिशु राखि, तौ जिन आन्यो सची॥
आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृप्त न हूजियो।
तब परम हरषित हृदय हरि ने सहस लोचन कीजिये॥

पुनि कर प्रणाम जु प्रथम इन्द्र, उछङ्ग धरि प्रभु लीनऊ।
ईसान इन्द्र सु चन्द्र छवि सिर, छत्र प्रभुजी के दीनऊ ॥७॥

सनतकुमार महेन्द्र, चमर दुइ ढारही।
सेस सक्र जयकार शब्द उच्चारही॥
उच्छव-सहित चतुरविधि, सुर हर्षित भये।
जोजन सहस निन्याणवे गगन उलघि गये॥

लघिगये सुरगिरि जहाँ पाडुक, वन विचित्र विराजही।
पाडुक शिला तहाँ अर्द्ध चन्द्र समान, मणि छवि छाजही॥
जोजन पचास विशाल दुगुणायाम वसु ऊँची गनी।
वर अष्ट-मगल-कनक कलसनि, सिंह पीठ सुहावनी ॥८॥

रचि मणिमण्डप शोभित, मध्य सिंहासनो।
थाप्यो पूरव मुख तह, प्रभु कमलासनो॥
बाजहि ताल मृदग, वेणु वीणा घने।
दुन्दुभि प्रमुख मधुर धुनि, अवर जु बाजई॥

बाजने बाजहि सची सब मिलि, धवल मगल गावही।
पुनि करहिं नृत्य सुरागना सब, देव कौतुक धावही॥
भरि क्षीर सागर जल जु हाथहि, हाथ सुरगिरि ल्यावही।
सौधर्म अरु ईशान इन्द्र जु कलश ले प्रभु न्हावही ॥९॥

बदन उदर अवगाह, कलशगत जानिये।
एक चार बसु जोजन, मान प्रमानिये॥
सहस अठोतर कलशा, प्रभु के सिर ढरै।
पुनि सिंगार प्रमुख, आचार सबै करै॥

करि प्रकट प्रभु महिमा महोच्छव आनि पुनि मातहि दए।
धनपतिहि सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहि गए॥
जनमाभिषेक महंत महिमा, सुनत सब सुख पावही।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मँगल गावही ॥१०॥

१२-तप कल्याणक

श्रमजल रहित शरीर, सदा सब मल रहिउ।
छीर वरन-वर रुधिर-प्रथम आकृति लहिउ॥
प्रथम सार सहनन, सुरूप विराजही।
सह सुगन्ध सुलच्छन मंडित छाजही॥

छाजहिं अतुलबल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने।
दस सहज अतिशय सुभग मूरति, बाललील कहावने॥
आबाल काल त्रिलोक पति जिन रुचित उचित जु नित नए।
अमरोपुनीत पुनीत अनुपम, सकल भोग बिभोगए॥११॥

भवतन भोग विरक्त, कदाचित चित्तए।
धन यौवन पिय पुत्त, कलत्त अनित्तये॥
कोउ नहिं शरन मरन दिन, दुख चहुँगति भर्यो।
सुख दुख एकहि भोगत, जिय विधिवश पर्यो॥

पर्यो विधिवश आन चेतन, आन जडजु कलेवरो।
तन अशुचि परतैं होय आस्रव, परिहरैंतैं सवरो॥
निरजरा तपबल होय, समकित, बिन सदा त्रिभुवन भ्रम्यो।
दुर्लभ विवेक बिना न कबहूँ परम धरम विषै रम्यो॥१२॥

ये प्रभु बारह पावन, भावन भाइया।
लौकांतिक वरदेव, नियोगी आइया॥
कुसुमांजलि दे चरन कमल सिर नाइया।
स्वयंबुद्धि प्रभु थुतिकरि तिन समुझाइया॥

समुझाय प्रभुको गये निजपुर, पुनि महोच्छव हरि कियो।
रुचिरुचिरचित्र विचित्र सिविका, कर सुनन्दन बन लियो॥
तहं पंचमुष्टी लोच कीनों, प्रथम सिद्धनि थुति करी।

]

मंडिय महाव्रत पंच दुद्धर, सकल परिग्रह परिहरी ॥१३॥

मणिमय भाजन केस, परिट्ठिय सुरपती।
छीरसमुद्र-जल खिपकरि गयो अमरावती ॥
तप संयमबल प्रभु कियो, मन परजय भयो।
मौनसहित तप करत, काल कछु तह गयो ॥

गयो कछु तह काल तपबल, ऋद्धि वसु विधि सिद्धिया।
जसु धर्मध्यानबलेन खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया ॥
खिपि सातवेंगुण जतनबिन तह, तीन प्रकृति जु बुधि बढिउ।
करि करण तीन प्रथम सुक्ल बल, क्षपकसेनी प्रभु चढिउ ॥१४॥

प्रकृति छतीस नवे—गुण थान विनासिया।
दसवे सूच्छमलोभ, प्रकृति तह नासिया ॥
सुकल ध्यान पद दूजो पुनि प्रभु पूरिया।
बारहवे गुण सोरह, प्रकृति जु चूरिया ॥

चूरियो त्रेसठ प्रकृति इहविधि, घातिया करमन तणी।
तप कियो ध्यानप्रयत बारह-विधि त्रिलोकशिरोमणी ॥
निःकर्म कल्याणक सु महिमा सुनत सब सुख पावही।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मंगल गावही ॥१५॥

१३—केवल ज्ञान कल्याणक

तेरहवे गुण-थान, सयोगि जिनेसुरो।
अनंतचतुष्टयमंडित, भयो परमेसुरो ॥
समवसरन तव धनपति, बहुविधि निरमयो।
आगमजुगतिप्रमान, गगनतल परिठयो ॥

परिठयो चित्र विचित्र मणिमय, सभा मंडप सोहये।
तिहि मध्य बारह बने कोठे, बैठ सुरनर मोहये ॥

मुनि कल्पवासिनि अरजिका पुनि, ज्योति भौमि भवनतिया।
पुनि भवन व्यंतर नभग सुरनर, पशुनि कोठे बैठिया ॥१६॥

मध्यप्रदेश तीन, मणिपीठ तहां बने।
गंधकुटी सिंहासन, कमल सुहावने ॥
तीन छत्र सिर सोहित त्रिभुवन मोहए।
अन्तरीच्छ कमलासन, प्रभुतन सोहए ॥

सोहए चौंसठि चमर ढरत, अशोकतरु तल छाजिये।
दिव्यधुनि प्रतिशब्दजुत तह, देवदुन्दुभि बाजए ॥
सुर पुहुपवृष्टि सुप्रभा मंडल, कोटि रवि छवि छाजए।
इमि अष्ट अनुपम प्रातिहारज, बर विभूति बिराजए ॥१७॥

दुइसै जोजनमं न सुभिक्ष चहूँ दिसी।
गगन गमन अरु प्राणी वध नहिं अहनिसी ॥
निरुपसर्ग निरहार, सदा जगदीसए।
आनन चार चहुं दिसि, शोभित्त दीसए ॥

दीसय असेस विशेष विद्या, विभव वर ईशरपनो।
छाया विवर्जित शुद्ध फटिक समान तन प्रभुका बनो ॥
नहिं नयन पलक पतन, कदाचित, केस नख सम छाजही।
ये घातियाछय जनित अतिशय, दश विचित्र विराजही ॥१८॥

सकल अरथमय मागधि—भाषा जानिये।
सकल जीवगत मैत्री—भाव बखानिये ॥
सकल रितुज फलफूल वनस्पति मन हरै।
दरपनसम मनि अवनि, पवन गति अनुसरै ॥

अनुसरै परमानन्द सबको, नारि नर जे सेवता।
जोजन प्रमाण धरा सुभाजहिं जहाँ मारुत देवता ॥
पुनि करहिं मेघकुमार गंधोदक सुवृष्टि सुहावनी।

पद कमलतर सुर खिपहि धरणि ससि शोभा बनी ॥१६॥

अमल गगन तरु अरु दिश, तह अनुहारही।
चतुरनिकाय देवगण जय जयकारही॥
धर्मचक्र चले आगे, रवि जह लाजही।
पूनि भृंगार-प्रमुख वसु, मगल राजही॥

राजही चौदह चारु अतिशय, देव रचित सुहावने।
जिनराज केवल ज्ञान महिमा, अवर कहत कहा बने॥
तव इन्द्र आय कियो महोच्छव सभा शोभा अति बनी।
धर्मोपदेश दियो तहा, उच्चरिय बानी जिन तनी॥२०॥

क्षुधा तृषा अरु राग, द्वेष असुहावने।
जनम जरा अरु मरण, त्रिदोष भयावने॥
रोग सोग भय विस्मय, अरु निद्रा घनी।
खेद स्वेद मद मोह- अरति चिन्ता गनी॥

गनिये अठारह दोष तिनकरि, रहित देव निरजनो।
नव परमकेवललब्धि मण्डित, सिवरमनि मनरजनो॥
श्री ज्ञानकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावही।
भखि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर, जगत मगल गावही॥२१॥

१४—निर्वाण कल्याणक

केवलदृष्टि चराचर, देख्यो जारिसो।
भव्यनिप्रति उपदेसो, जिनवर तारिसो॥
भवभयभीत भविकजन, शरणं आइया।
रत्नत्रयलच्छन शिवपथनि लगाइया॥

लगाइया पन्थ जु भव्य पुनि प्रभु, तृतीय सुफल जू पूजियो।
तजि तेरहें गुणनाथ जोग, अयोगपरणपग धारियो॥

पुनि चौदहे चौथे सकलबल बहत्तर तेरह हती।
इमि घाति वसुविधि कर्म पहुँच्यो समय की पचमगती ॥२२॥

लोकशिखर तनुबात,—वलयमहं संठियो।
धर्मद्रव्यबिन गमन न जिहि आगे कियो॥
नयनरहित मूषादर, अंबर जारिसो।
किमपि हीन निजतनुते, भयो प्रभु तारिसो॥

तारिसो पर्यय नित्य अविचल, अर्थ पर्जय छन छयी।
निश्चयनयेन अनन्तगुण, विवहार नय वसु गुणमयी॥
वस्तु स्वभाव विभावविरहित शुद्ध परिणति परणयो।
चिद्रूप परमानन्द मन्दिर, सिद्धपरमातम भयो ॥२३॥

तनुपरमाणू दामिनिपर, सब खिर गये।
रहे शेष नखकेश-रूप जे परिणये॥
तब हरिप्रभुमुख चारविधि, सुरगण शुभसच्यो।
मायामइ नखकेस रहित, जिनतनु रच्यो॥

रचि अगर चन्दन प्रमुख परिमल, द्रव्य जिन जयकारियो॥
पदपतित अगनकुमार मुकुटानल, सुविधि संस्कारियो॥
निर्वाण कल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावही।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावही ॥२४॥

मैं मतिहीन भगतिबस, भावन भाइया।
मंगलगीतप्रवध सु जिनगुण गाइया॥
जो नर सुनहि बखानि सुर धरि गावही।
मनवांछित फल सो नर निहचै पावही॥

पावही आठो सिद्धि नव निधि, मन प्रतीत जो लावही।
भ्रमभाव छूटै सकल मनके, निज स्वरूप लखावहीं॥

पुनि हरहिं पातक टरहिं विघन, सुहोहि मगल नित नये।
भणि 'रूपचन्द' त्रिलोक पति, जिनदेव चउसघहि जये। २५॥

१४—अभिषेक नित्य पूजादि संग्रह

वेदी मे भगवान को [illegible] मे विराजमान करते समय पढे

[illegible] देवमम्नापयन् सुरवरा सुर शैल [illegible] मुर[illegible]मक्षनतायपुष्पै., सभावयामि पुर एवतदीय बिंव ॥ [illegible] वनाकर भगवान् की स्थापना करें। अर्घ चढावे) जिनप्रतिबिम्ब स्थापन, अर्घं।

दूरावनम्र सुरनाथ किरीट कोटी, सलग्न रत्नकिरणच्छवि धूनरांघ्रि, प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टै। भंक्तयाजलै, जिन पति बहुधाऽभिषिंचे ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्त भगवन्त कृपाल-सन्त वृषभादिमहावीर पर्यन्त चतुर्विंशतितीर्थ करपरमदेवमाद्यानामाद्ये जम्बू द्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे ' मासे ' पक्षे शुभदिने मुनि आर्यिका श्रावक श्राविकाणा सफल कर्म क्षयार्थ जलेनाभिषिंचे नम ॥ (जल के कलश की धारा श्री जिन प्रतिमा पर देवे)

१५—विनय पाठ

इह विधि ठाडो होयके, प्रथम पढै जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्मजु आठ ॥१॥

अनन्त चतुष्टय के धनी, तुम ही हो सिरताज।
मुक्तिवधू के कन्त तुम, तीन भुवन के राज ॥२॥

तिहु जग की पीडा हरन, भवदधि शोषणहार।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिव सुख के करतार ॥३॥

हरना अघ अधियाग के, करता धर्म प्रकाश।
तारना पद दातार हो, धरता निजगुण रास ॥४॥

धर्मामृत उर जलधि मो, ज्ञान-भानु तुम रूप।
तुमरे चरण सरोज को, नावत तिहुं-जग भूप ॥५॥

मै वन्दौं जिनदेव को, कर अति निर्मल भाव।
कर्म-बन्ध के छेदने, और न कोय उपाय ॥६॥

भविजन कौं भव-कूपतै, तुम ही काढनहार।
दीनदयाल अनाथपति, आतम गुण भण्डार ॥७॥

चिदानन्द निर्मल कियो, धोय कर्म रज मैल।
सरल करी या जगत मे, भविजन को शिवगैल ॥८॥

तुम पद पङ्कज पूजतैं, विघ्न रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरै, विष निरविषता थाय ॥९॥

चक्री खग सुर इन्द्र पद, मिलै आपतै आप।
अनुक्रमकर शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप ॥१०॥

तुम बिन मै व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन।
जन्म जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन ॥११॥

पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेय।
अञ्जन से तारे प्रभू, जय जय जय जिनदेव ॥१२॥

थकी नाव भवदधि विषै, तुम प्रभु पार करेय।
खेवटिया तुम हो प्रभू, जय जय जय जिनदेव ॥१३॥

राग सहित जग मे रुल्यो, मिले सरागी देव।
वीतराग भेट्यो अबै, मेटो राग कुटेव ॥१४॥

कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यंच अज्ञान।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान ॥१५॥

तुमको पूजैं सुरपती, अहपति नरपति देव।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव ॥१६॥

अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार।
मैं डूबत भव सिन्धु मैं, खेड लगाओ पार ॥१७॥

इन्द्रादिक गणपति थकें, कर विनती भगवान।
अपनो विरद निहारिकैं, कीजै आप समान ॥१८॥

तुमरी नेक सुदृष्टि तैं, जग उतरत है पार।
हा हा! डूब्यो जात हौं, नेक निहार निकार ॥१९॥

जो मैं कहहूँ और सो, तो न मिटै उरझार।
मेरी तो तोसों बनी, तातैं करो पुकार ॥२०॥

वन्दों पाँचों परम गुर, सुर गुरु वदत जास।
विघन हरन मङ्गल करन, पूरन परम प्रकाश ॥२१॥

चौबीसो जिन पद नमो, नमो शारदा माय ॥
शिव मग साधक साधु नमि, रच्यो पाठ सुखदाय ॥२२॥

नित्य नियम पूजा

ओ जय जय जय। नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु।
णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमोलोए सव्वेसाहूणं ॥१॥

ओ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः। (पुष्पाञ्जलि क्षेपण) चत्तारि मङ्गलं, अरहन्त मङ्गलं, सिद्ध मङ्गलं, साहूमङ्गलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मङ्गलं, चत्तारि लोगुत्तमा, अरहन्तलोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मोलोगुत्तमा। चत्तारिसरणं पव्वज्जामि, अरहन्त सरणं-पव्वज्जामि सिद्धसरणं पव्वज्जामि साहुसरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तो

पंचपरमेष्ठी का अर्घ

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनइष्ट महं यजे ॥२॥

ओं ह्रीं श्रीं अरहन्तसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

यदि अवकाश हो तो यहां पर सहस्रनाम पढकर दश अर्घ देना चाहिये। नहीं तो नीचे लिखा श्लोक पढकर एक अर्घ चढाना चाहिये।

सहस्रनाम का अर्घ

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथ महं यजे ॥३॥
ओं ह्रीं श्रीं भगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वस्ति मंगल

श्री वृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अजितः ।
श्री सम्भव. स्वस्ति, स्वस्ति श्री अभिनन्दनः ।
श्री सुमतिः स्वस्ति स्वस्ति श्री पद्मप्रभः ।
श्री सुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री चन्द्रप्रभ. ।
श्री पुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शीतल. ।
श्रीश्रेयासः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः ।
श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अनन्तः ।
श्रीधमः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शान्तिः ।
श्रीकुथु स्वस्ति, स्वस्ति श्री अरनाथः ।
श्रीमल्लि स्वस्ति, स्वस्ति श्री मुनिसुव्रतः ।
श्रीनमि स्वस्ति, स्वस्ति नेमिनाथ
श्रीपार्श्वः स्वस्ति स्वस्ति श्री वर्द्धमान ।

(पुष्पाजलि क्षेपण)

॥ इति जिनेन्द्र स्वस्ति मङ्गल विधान ॥

नित्याप्रकपाद्भुत केवलौघाः स्फुरन्मनः पर्यशुद्धबोधा ।
दिव्यावधिज्ञानवलप्रबोधा. स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः । १ ।

से प्रत्येक श्लोक के अन्त मे पुष्पाञ्जलि क्षेपन करना चाहिये ।

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीज सभिन्नसश्रोतृपादानुसारि ।
चतुर्विध बुद्धिवल दधाना स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न. । २ ।

सस्पर्शन सश्रवर्ण च दूरादास्वादनघ्राणविलोकनानि ।
दिव्यान् मतिज्ञानबलाद्वहत, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न । ३।

प्रज्ञाप्रधान श्रमण समृद्धा. प्रत्येकबुद्धाः दशसर्वपूर्वै. ।
प्रवादिनोऽष्टागनिमित्तविज्ञा स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न. । ४।

जघाग्निश्रेणिफलाम्बुतन्तु प्रसून बीजाकुर चारणाह्व. ।
नभोऽगणस्वैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः । ५।

अणिम्नि दक्षा कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि । मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः । ६ ॥
अकामरूपित्ववशित्वमैश्यं प्राकाम्य मन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ता ।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधाना, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः ॥७॥
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्था ।
ब्रह्मापरं घोरगुणश्चरतः स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः ॥८॥
आमर्षसर्वौषधयस्तथाशीर्विषविषादृष्टिविषविषाश्च । सखिल्ल
विड्जल्लमलौषधीशा, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः ॥ ९ ॥
क्षीरं स्रवतोऽत्र घृतं स्रवंतो मधुस्रवतोऽप्यमृतं स्रवतः ।
अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः ॥१०॥
(पुष्पाञ्जलिं क्षेपेत्)

देव शास्त्र गुरु पूजन

शुद्ध ब्रह्म¹ परमात्मा शब्द ब्रह्म² जिनवाणि ।
शुद्धातम³ साधकदशा नमो जोड जुग पाणि⁴ ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु समूह
अत्रावतरावतर संवौषट् इति आह्वानम्
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ स्थापनम
अत्रमम सन्निहितो भव भव वषट्
इतिसन्निधिकरणं

---

(१) आत्मा (२) आत्मा का कथन करने वाले शब्द (३) शुद्धात्मा के प्राप्ति हेतु अवस्था में वर्तते हुए आचार्योपाध्याय और साधु (४) दोनों हाथ,

अथाष्टक

जलम्

आशा की प्यास बुझाने को,
अब तक मृग तृष्णा में भटका ।
जल समझ विषय विषभोगो को,
उनकी ममता मे था अटका ।।
लख सौम्य दृष्टि तेरी प्रभुवर,
समता—रस पीने आया हूँ ।
इस जल से प्यास बुझाई ना,
इस को लौटाने लाया हूँ ।।

ॐ ह्रीं जैन शासन गुरुभ्यः जलं

चन्दनम्

क्रोधानल से जब जला हृदय,
चन्दन ने कोई न काम किया ।
तन को तो शान्त किया इसने,
मनको न मगर आराम दिया ।
संसार ताप से तप्त हृदय,
सन्ताप मिटाने आया हूँ ।
चरणों में चन्दन अर्पण कर,
शीतलता पाने आया हूँ ।।

ॐ ह्रीं जैन शासन गुरुभ्यः चन्दनं

अक्षतम्

अभिमान किया अब तक जड पर,
अक्षय१ निधि को ना पहचाना ।
मै जड का हूँ जड मेरा है यह,
सोच बना था मस्ताना ॥
क्षत२ मे विश्वास किया अब तक
अक्षत३ को प्रभूवर ना जाना ।
अभिमान की आन मिटाने को,
अक्षय निधि तुमको पहिचाना ॥

ॐ ह्री देव शास्त्र गुरुभ्य अक्षतम्

पुष्पम्

दिन रात वासना में रहकर,
मेरे मन ने प्रभु सुख माना ।
पुरुपत्व४ गमाया पर प्रभुवर,
उसके छल५को ना पहिचाना ॥
माया ने डाला जाल प्रथम,
कामुकता ने फिर बाध लिया ।
उसका प्रमाण यह पुष्प बाण६,
लाकर के प्रभुवर भेट किया ॥

ॐ ह्री देव शास्त्र गुरुभ्य पुष्पम्

---

(१) कभी नाश न होने वाली आत्मा (२) विनाशीक (३) अविनाशी (४) मुक्ति को प्राप्त कराने वाला सच्चा पुरुषार्थ । (५) विषय भोगो की प्राप्ति में पुरुषार्थ माना (६) काव्य की भाषा मे पुष्प को कामदेव के बाण की उपमा दी गई है ।

नैवेद्यं

पर पुद्गल का भक्षण करके,
यह भूख मिटाना चाही थी ।
इस नागिन से बचने को प्रभु,
हर चीज बनाकर खाई थी ॥

मिष्टान्न अनेक बनाये थे,
दिन–रात भखे न मिटी प्रभुवर ।
अब संयम भाव जगाने को,
लाया हूँ ये सब थाली भर ॥

ॐ ह्री देव-शास्त्र गुरुभ्य: नैवेद्यम्

दीपम्

पहिले अज्ञान मिटाने को,
दीपक था जग मे उजियाला ।
उससे न हुआ कुछ तब युग ने,
बिजली का बल्ब जला डाला ॥

प्रभु भेद–ज्ञान(१) की आंख न थी,
क्या कर सकती थी वह ज्वाला ।
यह ज्ञान है कि अज्ञान कहो,
तुमको भी दीप दिखा डाला ॥

ॐ ह्री देव शास्त्र गुरुभ्य. दीपम्

---

(१) अपने और पराये (आत्मा और जड) की पहिचान ।

धूपम्

शुभ कर्म कमाऊँ सुख होगा,
मैंने अब तक यह माना था ।
पाप कर्म को त्याग पुन्य को,
चाह रहा अपना ना था ॥

किन्तु समझकर शत्रु[1] कर्म को,
आज जलाने आया हूँ ।
लेकर दशाग यह धूप,
कर्मं की धूम उडाने आया हूँ ॥

ॐ ह्री देव शास्त्र गुरुभ्य: धूपम्

फलं

भोगो को अमृत फल जाना,
विषयो में निश दिन मस्त रहा ।
उनके संग्रह में हे प्रभुवर मैं,
व्यस्त[1] अस्त[2] अभ्यस्त[3] रहा ॥

शुद्धात्म प्रभो जो अनुपम फल,
मैं उसे खोजने आया हूँ ।
प्रभु सरस सुवासित ये जडफल,
मै तुम्हें चडाने लाया हूँ ॥

ॐ ह्री देव शास्त्र गुरुभ्य: फलम्

---

(१) समस्त शुभ-अशुभ कर्मो को ।

(१) पोत (२) दुःखी (३) अनादिकाल अभ्यासी।

अर्घम्

वह मूल्य जगत का वैभव यह,
क्या हमको सुखी बना सकता ।
अरे पूर्णता पाने में क्या,
इसकी है आवश्यकता ॥

मैं स्वयं पूर्ण हूँ अपने मे,
प्रभु है १अनर्घ मेरी माया ।
बहुमूल्य द्रव्य मय अर्घ लिये,
अर्पण के हेतु चला आया ॥

ॐ ह्री देव शास्त्र गुरुभ्य: अर्घम्

जयमाला

समय१ सार जिनदेव है जिन प्रवचन जिनवाणि
नियमसार२ निर्ग्रन्थ-गुरु करें कर्म की हानि

हे वीतराग सर्वज्ञ प्रभो,
तुमको ना अब तक पहिचाना ।
अतएव पड़ रहे है प्रभुवर,
चौरासी३ के चक्कर खाना ॥
करुणा,निधि तुमको समझ नाथ,
भगवान भरोसे पड़ा रहा ।

(१) अमूल्य ।

(१) शुद्धात्मा (२) शुद्ध (निश्चय) चरित्र (३) चौरासी लाख योनियो मे ।

भरपूर सुखी कर दोगे तुम,
यह सोचे सन्मुख खडा रहा ॥
तुम वीतराग हो लीन स्वयं मे,
कभी न मैंने यह जाना।
तुम हो निरीह[१] जग से कृत-कृत,
इतना ना मैंने पहिचाना ॥
प्रभु वीतराग की वाणी मे,
जैसा जो तत्व दिखाया है।
जो होना है सो निश्चित है,
केवल ज्ञानी ने गाया है ॥
उस पर तो श्रद्धा ला न सका,
परिवर्तन का अभिमान किया।
बन कर परका कर्ता अब तक,
सत् का न प्रभो सम्मान किया ॥
भगवान तुम्हारी वाणी मे,
जैसा जो तत्व दिखाया है।
स्याद्वाद नय अनेकान्त मय,
समयासार[१] समझाया है ॥
उस पर तो ध्यान दिया न प्रभो,
विकथा मे समय गमाया है।

---

(१) इच्छा रहित (२) जिन्हे कुछ करना बाकी न रहा हो उन्हे कृत कृत कहते है।
(१) शुद्धात्मा।

शुद्धात्म रुचि न हुई मन में,
ना मन को उधर लगाया है ॥
मैं समझ न पाया था अब तक,
जिनवाणी किसको कहते है ।
प्रभु वीतराग की वाणी मे,
कैसे क्या तत्व निकलते है ॥
राग धर्म मय धर्म राग मय,
अब तक ऐसा जाना था ।
शुभ कर्म कमाते सुख होगा,
बस अब तक ऐसा माना था ॥
पर आज समझ मे आया है,
कि वीतरागता धर्म अहा ।
राग भाव मे धर्म मानना,
जिन मत मे मिथ्यात्व कहा ॥
वीतरागता की पोषक ही,
जिनवाणी कहलाती है ।
यह है मुक्ति का मार्ग निरन्तर,
हम को जो दिखलाती है ॥
उस वाणी के अन्तर्तम को,
जिन गुरुओ ने पहिचाना है ।
उन गुरुवर्यो के चरणो मे,
मस्तक बस हमे झुकाना है ॥
दिन रात आत्मा का चिंतन,
मृदु सम्भाषण में वही कथन ।

निर्वस्त्र दिगम्बर काया से भी,
प्रगट हो रहा अन्तर्मन ॥
निर्ग्रन्थ दिगम्बर सद्ज्ञानी,
स्वातम मे सदा विचरते जो ।
ज्ञानी ध्यानी समरससानी,
द्वादश विधि तप नित करते जो ॥
चलते फिरते सिद्धो से गुरु,
चरणों मे शीश झुकाते हैं ।
हम चले आपके कदमो पर,
नित यही भावना भाते हैं ॥
हो नमस्कार शुद्धातम को,
हो नमस्कार जिनवर वाणी ।
हो नमस्कार उन गुरुओ को,
जिनकी चर्या सम–रस सानी ॥
दर्शन दाता देव हैं आगम सम्यग्ज्ञान ।
गुरु–चरित्र की खानि है मैं वन्दू धरिध्यान ॥

ॐ ह्रीं देव शास्त्र गुरुभ्य

महार्घम् ।

समाप्त

देव शास्त्र गुरु पूजा

(श्री युगल एम० ए०)

स्थापना

केवल रवि-किरणों से जिसका
सम्पूर्ण प्रकाशित है अन्तर,
उस श्री जिनवाणी मे होता
तत्वो का सुन्दरतम दर्शन ।
सद्दर्शन—बोध—चरण—पथ पर,
अविरल जो बढते हैं मुनिगण,
उन देव परम आगम गुरु को
शत-शत वंदन शत-शत वदनं ॥

ॐ ह्री देवशास्त्र गुरुभ्यो अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानम् अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, सन्निधिकरणम् ॥

इन्द्रिय के योग मधुर विष सम,
लावण्यमयी कचन काया ।
यह सब कुछ जड़ की क्रीड़ा है,
मैं अब तक जान नही पाया ॥
मैं भूल स्वयं के वैभव को,
पर ममता मे अटकाया हूं ।

अब निर्मल सम्यक् नीर लिये,
मिथ्या मल धोने आयाहूँ ॥ जलम् ॥

जड चेतन की सब परिणति प्रभु !
अपने अपने मे होती है ।

अनुकूल१ कहें प्रतिकूल२ कहें
यह झूठी मन की वृत्ती है ।

प्रतिकूल सयोगो मे क्रोधित,
होकर ससार बढाया है ।

सन्तप्त हृदय प्रभु ! चन्दन सम,
शीतलता पाने आया है ॥ चन्दनम् ॥

उज्ज्वल हू कु द३ धवल हूँ प्रभू !
पर से न लगा हूँ किंचित् भी ।

फिर भी अनुकूल लगें उन पर,
करता अभिमान निरन्तर ही ॥

जड पर झुक झुक जाता चेतन,
की मार्दव४ की खडित काया ॥

निज शाश्वत५ अक्षत-निधि पाने,
अब दास चरण-रज मे आया ॥अक्षतम ॥

यह पुष्प सुकोमल कितना है,
तन मे माया१ कुछ शेप नहीं ।

निज अन्तर का प्रभु ! भेद कहूँ,
उसमे ऋजुता२ का लेश नहीं ॥

१—अच्छा २—बुरा ३—एक श्वेत पुष्प ४—निरभिमानता ५—अविनाशी १—कुटिलाई २— सरलता

चितन कुछ, फिर सम्भाषण कुछ,
किरिया कुछ की कुछ होती है।
स्थिरता निज मे प्रभु पाऊँ जो,
अन्तर का कालुष धोती है ॥ पुष्पम् ॥
अबतक अगणित जड द्रव्यो से,
प्रभु! भूख न मेरी शान्त हुई।
तृष्णा की खाई खूब भरी
पर रिक्त रही वह रिक्त रही ॥
युग युग से इच्छा सागर मे,
प्रभु! गोते खाता आया हूँ।
पचेन्द्रिय मन के षट् रस तज,
अनुपम रस पीने आया हूँ। नैवेद्यं ॥
जग के जड दीपक को अब तक,
समझा था मैने उजियारा।
झझा के एक झकोरे मे,
जो बनता घोर तिमिर कारा।
अतएव प्रभो! यह नश्वर दीप,
समर्पण करने आया हूँ,
तेरी अन्तर लौ मे निज अन्तर
दीप जलाने आया हूँ ॥ दीपम् ॥
जड़ कर्म घुमाता है मुझको,
यह मिथ्या भ्रान्त रही मेरी,

म राग--द्वेष किया करता,
जब परिणति होती जड केरी[4]।
यो भाव-करम या भाव-मरण,
सदियो से करता आया हूं
निज अनुपम गंध[5] अनल[6] से प्रभु,
परगंध[7] जलाने आया हूं ॥ धूपम् ॥
जग मे जिसको निज कहता मै,
वह छोड़ मुझे चल देता है
मैं आकुल व्याकुल हो लेता,
व्याकुल का फल व्याकुलता है।
मैं शान्त निराकुल चेतन हूं,
है मुक्तिरमा सहचरि मेरी,
यह मोह तडक कर टूट पडे
प्रभु ! सार्थक फल पूजा तेरी ॥ फलम् ॥
क्षण भर निज रस को पी चेतन
मिथ्या मल को धो देता है
काषायिक भाव विनष्ट किये
निज आनन्द अमृत पीता है।
अनुपम सुख तव विलसित होता
केवल रवि जगमगा करता है,
दर्शन बल पूर्ण प्रगट होता
यह ही अर्हन्त अवस्था है ॥

4-की 5-स्वरूपाचरण 6-अग्नि 7-वैभाविक परिणति

तन धन को साथी समझा था
पर ये भी छोड चले जाते ।। ५

मेरे न हुये ये मै इनसे
अति ;भिन्न अखड निराला हूँ,

निज मे पर से अन्यत्व५ लिये
निज सम रस पीने वाला हूँ ।।६

जिसके शृङ्गारो मे मेरा
यह मँहगा जीवन घुल जाता,

अत्यन्त अशुचि६ जड काया से
इस चेतन का कैसा नाता ।।७

दिन रात शुभाशुभ भावो से
मेरा व्यापार चला करता

मानस वाणी और काया से
आस्रव७ का द्वार खुला रहता ।। ८

शुभ और अशुभ की ज्वाला से
झुलसा है मेरा अन्तस्तल,

शीतल समकित किरणे फूटें
सवर ८ से जागे, अन्तर्बल । ९

फिर तप की शोधक वन्हि जगे
कर्मों की कड़ियाँ टूट पडे

---

* छन्द, न० २ से छन्द न० १३ तक बारह भावनाएँ है ।

सर्वांग निजात्म प्रदेशों से,
अमृत के निर्झर९ फूट पड़ें। १०

हम छोड़ चलें यह लोक१० तभी
लोकांत बिराजें क्षण में जा,
निज लोक हमारा वासा हो,
शोकांत बनें फिर हमको क्या ॥ ११

जागे मम दुर्लभ बोधि११ प्रभो!
दुर्नयतम सत्वर टल जावें,
बस ज्ञाता-दृष्टा रह जाऊँ
मद - मत्सर मोह- विनश जावे ॥ १२

चिर रक्षक धर्म१२ हमारा हो
हो धर्म हमारा चिर साथी॥
जग मे न हमारा कोई था,
हम भी न रहें जग के साथी ॥ १३

चरणों मे आया हूं प्रभुवर
शीतलता मुझको मिल जावें
मुर्झाई ज्ञान लता मेरी
निज अन्तर्बल१ से खिल जावें ॥१४

सोचा करता हूं भोगों से
बुझ जावेगी इच्छा ज्वाला,
परिणाम निकलता है लेकिन
मानो पावक२ मे घी डाला ॥१५

तेरे चरणों की पूजा से
इन्द्रिय सुख की ही अभिलाषा,

अब तक न समझ ही पाया प्रभु !
सच्चे सुख की भी परिभाषा ॥१६

तुम तो अविकारी हो प्रभुवर !
जग के माणिक मोती सारे १७

स्याद्वाद मयी तेरी वाणी३
शुभनय के झरने झरते हैं

उस पावन नौका पर लाखो
प्राणी भव-वारिधि तिरते है ॥१८

हे गुरुवर! शाश्व सुख दर्शक
यह नग्न स्वरूप तुम्हारा है,

जग की नश्वरता का सच्चा
दिग्दर्शन करने वाला है ॥१९

जब जग विषयो मे रच पच कर
गाफिल१ निद्रा में सोता हो,

अथवा वह शिव२ के निष्कटक
पथ मे विष-कंटक३ बोता हो ॥२०

हो अर्द्ध निशा का सन्नाटा
वन मे वनचारी४ चरते हो,

१—आत्म-पुरुषार्थ २—अग्नि ३—शास्त्र

१—अचेत ।

२—मोक्ष। ३—वासनाओं के काटे ४—वन के सिह आदि ।

तव शान्त निराकुल मानस तुम
तत्वों का चिंतन करते हो॥ २१
चरते तप शैल नदी तट पर
तरु तल वर्षा की झाड़ियों में
समता रस पान किया करते
सुख दुख दोनों की घड़ियों मे ॥२२
अन्तर ज्वाला हरती वाणी
मानों झड़ती हों फुलझड़ियाँ,
भव बन्धन तड़-तड़ टूट पड़ें
खिल जावें अन्तर की कलियाँ१ ॥२३
तुमसा सा दानी क्या कोई हो
जय को देदी जग की निधियाँ,
दिन रात लुटाया करते हो
सम-समर२ की अविनश्वर मणियां ॥२४

हे निर्मल देव ! तुम्हें प्रणाम,
हे ज्ञान दीप आगम ! प्रणाम।
हे शान्ति त्याग के मूर्तिमान,
शिव पथ - पंथी गुरुवर ! प्रणाम ॥

१—गुण २—समता शान्ति ।

—:—

* श्री तीस चौबीसीजी की पूजा *

पांच भरत शुभ क्षेत्र पांच ऐरावते
आगत नागत वर्तमान जिन सास्वते
सो चौबिसी तीस जजूं मन लायके
आह्वानन विधिकरु वार त्रय गाय के ॥

ॐ ह्रीं पचमेरु सम्बन्धी पाच भरत पाच ऐरावत क्षेत्रविषे तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नम. अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं ।

ओं ह्रीं अत्र तिष्ठतिष्ठ ठ. ठः स्थापन । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

नीर दधि क्षीर सम ल्यायो, कनक की भृङ्ग भरवायो ॥
अर्घ तुम चरण ढिग आयो, जनम जरा रोग नशवायो ॥
दीप अढाई सरस राजे, क्षेत्र दस ता विषें छाजे ।
सात शत बीस जिनराजे, पूजतां पाप सब भाजे ॥ १ ॥

ओं ह्रीं पांच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नम. । जलम् ।

सुरभजुत चन्दन ल्यायो, संग करपूर घसवायो ।
धार तुम चरण ढरवायो, भव आताप नशवायो ॥
दीप अढाई सरस राजे, क्षेत्र दस ता विषे छाजे ।
सात शत बीस जिनराजे, पूजता पाप सब भाजे ॥ २ ॥

ओं ह्रीं पाच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नम. । चन्दनम् ॥

चंद सम तंदुल सारं, किरण मुक्ता जु उनिहारं ।
पुंज तुम चरण ढिग धारं, अक्षयपद प्राप्त के कारं ॥
दीप अढ़ाई सरस राजे, क्षेत्र दस ता विषै छाजे ।
सात शत बीस जिनराजे, पूजतां पाप सब भाजे ॥ ३ ॥

ओ ह्रीं पाच भरत पाच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः । अक्षतम् ॥

पुष्प शुभ गधजुत सोहैं, सुगंधित नास मन मोहै ।
पजत तुम मदन छय होवै, मुकत कर पलक में जोवै ॥
दीप अढाई सरस राजे, क्षेत्र दस ता विषै छाजे ।
सात शत बीस जिनराजे, पूजतां पाप सब भाजे ॥ ४ ॥

ओ ह्रीं पाच भरत पाँच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः । पुष्पम् ॥

सरस व्यंजन लिया ताजा, तुरत बनवायके खाजा ।
चरण तुम जजों हो महाराजा, क्षुधादिक पलक मे भाजा ॥
दीप अढ़ाई सरस राजे, क्षेत्र दस ता विषै छाजे ।
सात शत बीस जिनराजे, पूजता पाप सब भाजे ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं पाच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः । नैवेद्यम् ॥

दीप तम नाशकारी है, सरस शुभ जोतिधारी है ।
होय दशों दिश उजारी हैं, धूम्र मिस पाप छारी है ॥
दीप अढ़ाई सरस राजे, क्षेत्र दस ता विषै छाजे ।
सात शत बीस जिनराजे, पूजता पाप सब भाजे ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं पाच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः । दीपम् ।

सरस शुभ धूप दस अगी, जलाऊँ अग्नि के संगी ।
करम की सैन चतुरंगी, चरन तुम पूजतें अंगी ॥
दीप अढ़ाई सरस राजे, क्षेत्र दस ता विषै छाजे ।
सात शत बीस जिनराजे, पूजता पाप सब भाजे ॥ ७ ॥

ओ ह्रीं पाच भरत पाच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नम । धूपम् ॥

मिष्ट उत्कृष्ट फल ल्यायो, अष्ट अरि दुष्ट न शवायो ।
श्री जिन भेंट धरवायो, कार्य मम बांछता पायो ॥
दीप अढाई सरस राजे, क्षेत्र दस ता विषै छाजे ।
सात शत बीस जिनराजे, पूजतां पाप सब भाजे ॥ ८ ॥

ओ ह्री पांच भरत पाच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः । फलम् ॥

द्रव्य आठो जु लीना है, अर्घ करमे नवीना है ।
पूजते पाप छीना है, 'भानमल' जोर कीना है ॥
दीप अढाई सरस राजे, क्षेत्र दस ता विषै छाजे ।
सात शत बीस जिनराजे, पूजता पाप सब भाजे ॥ ९ ॥

ओं ह्री पाच भरत पाच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः । अर्घम् ॥

जम्बूद्वीप की प्रथम मेरु की, दक्षिणदिशा भरत शुभ जान ।
तहा चौबीसी तीन विराजें, आगत नागत और वर्तमान ॥
तिनके चरणकमल को निशदिन, अर्घ चढाय करू उर ध्यान ।
या ससार समुद्र से तारो, अहो जिनेश्वर करुणावान ॥

ओं ह्री सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी के बहत्तर जिनालयेभ्यो नमः ॥ अर्घम् ॥

सुदर्शन मेरु की उत्तर दिशा में, ऐरावत क्षेत्र शुभ जान ।
आगत नागत वर्तमान जिन, बहत्तर सदा सास्वते जान ॥
तिनके चरणकमल को निशदिन अर्घ चढ़ाय करूँ उर ध्यान ।
या संसार समुद्र सेतारो, अहो जिनेश्वर करुणावान ॥
ओ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिशा भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबसी के बहत्तर जिनालयेभ्यो नमः ॥ अर्घम् ॥

खण्ड धातु की अचल सुमेर, दक्षिण तास भरत बहु घेर ।
तामे चौबीसी त्रय जान, आगत नागत और वर्तमान ॥
ओं ह्रीं धातु की खण्ड द्वीप की पश्चिम दिशा अचलमेरु की दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी के बहत्तर जिनालयेभ्यो नमः ॥ अर्घम् ॥

कुसुमलता छन्द ।

खण्ड धात की विजय मेरु के, दक्षिण दिशा भरत शुभ जान ।
तहाँ चौवीसी तीन विराजे, आगत नागत अरु वर्तमान ॥
तिनके चरणकमल को निशदिन, अर्घ चढाय करूँ उर ध्यान ।
इस संसार भ्रमण ते तारो, अहो जिनेश्वर ! करुणावान ॥ ३ ॥
ओ ह्रीं धातु की खण्ड दीप की पूर्व दिशि विजय मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौवीसी के बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो ॥ अर्घम् ॥

इसी दीप की प्रथम शिखिर नी, उत्तर ऐरावत जु महान ।
आगत नागत वर्तमान जिन, बहत्तरि सदा सासते जान ॥
तिनके चरण कमल को निशदिन, अर्घ चढाई करूँ उर ध्यान ।
इस ससार भ्रमण ते तारो, अहो ! जिनेश्वर करुणावान ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं धातु की खण्ड दीप की पूर्व दिशि विजय मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीस के बहत्तरि-जिनेन्द्रेयो ॥ अर्घम् ॥

अचल मेरु की उत्तर दिश जान, ऐरावत शुभ क्षेत्र वखान।
तामे चौबीसी त्रय जान, आगत नागत और वर्तमान॥

ओ ह्रीं धातु की खण्ड की पश्चिमी दिशा अचल-मेरु की उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र सम्बधी तीन चौबीसी के बहत्तर जिनालयेभ्यो नमः॥ अर्घम्॥

द्वीप पुष्कर की पूरव दिशा, मन्दिर मेरु की दक्षिण भरत सा।
ता विषे चौबीसी तीन जू, अर्घ लेय जजूं परवीन जू॥

ओ ह्री पुष्कर द्वीप की पूर्व दिशा मन्दिर मेरु की दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी के बहत्तर जिनालयेभ्यो नमः॥ अर्घम्॥

गिरि सूं मन्दिर उतर जानियो, ताके पूर्व दिशा बखानिये।
ता विषे चौबीसी तीन जू, अर्घलेय जजूं परवीन जू॥

ओ ह्री पुष्कर द्वीप की पूर्व दिशा मन्दिर मेरु की उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी के बहत्तर जिनालेभ्यो नमः॥ अर्घम्॥

पश्चिम पुष्कर गिरि विद्युतमाल, ताके दक्षिण भरत क्षेत्र है— सुविशाल।
तामें चौबीसी हैं जु तीन, वसु द्रव्य लेय जजूं परवीन॥

ॐ ह्री पुष्करार्द्ध द्वीप की पश्चिमी दिशा भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी के बहत्तर जिनालयेभ्यो नमः॥ अर्घम्॥

माही गिरि के उत्तर जु ओर, ऐरावत क्षेत्र बनो निहोर।
तामें चौबीसी है जु तीन, वसु द्रव्य लेय जजूं परवीन॥

ओं ह्री श्री पुष्कर द्वीप की पश्चिम दिशा विद्युत माली मेरु की उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी के बहत्तर जिनालयेभ्यो नमः॥ अर्घम्॥

दीप अढाई के विषै, पंचमेरु है तांह।
दक्षिण उत्तर तास के, भरत ऐरावत भाम॥

भरत ऐरावत भाय एक क्षेत्र के मांही ।
चौबीसी है तीन दशो दिशि हो के माही ॥
दसो क्षेत्र के सात सौ बीस जिनेश्वर ।
अर्घ ल्याय कर जोडि जै जै रचिमल सुमन कर ॥

ओं ह्रीं पचमेरु सम्बन्धी दस क्षेत्र के विषै तीस चौबीसीजी के सात सौ
बीस जिनेन्द्रेभ्यो नम. ॥ अर्घम् ॥

जयमाल

दोहा।

चौबीसों तीसों नमो, पूजा परम रसाल ।
मन, वचन, तन शुद्ध कर, अब वरणो जयमाल ॥

जय दीप अढाई मे जुसार, गिर पांच मेरु उन्नत अपार ।
तागिर पूर्व-पश्चिम जु ओर, शुभ क्षेत्र विदेह बसै जु ठौर ॥
ता दक्षिण क्षेत्र भरत सु जानि, है उत्तर ऐरावत महान ।
गिर पांच तने दश क्षेत्र जोय, छवि ताकी बरन न सके कोय ॥
ताको वरणूं वरणन विशाल, तैसा ही ऐरावत है रसाल ।
इस क्षेत्र बीच विजियार्द्ध एक, वा ऊपर विद्याधरै अनेक ॥
इस क्षेत्र विषे शत षंड जानि, तहा छहों काल बरतै महान ।
जो तीन काल मे भोग भूमि, दश जाति कल्पतरु रहे भूमि ॥
तब चौथो काल लग जु आय, तब कर्म भूमि वर्तै सुहाय ।
जब तीर्थ कर को जन्म होई, सुरलेय जजै गिर पर सुजोय ॥
बहु भक्ति करैं सब देव आय, ताथेई थेई थेई की तान ल्याय ।
हरि तांडव नृत्य करे अपार, सब जीवन मन आनन्द कार ॥

इत्यादि भक्ति करिकै सुरेन्द्र, निज थान जाय जुत देव वृन्द ।
इह विधि पाचो कल्यान होय, हरि भक्ति करै अति हर्ष जोय ॥

या काल विषै पुण्यवन्त जीव, नर जन्म धार शिव लहै अतीव ।
तब श्रेष्ठ पुरुष परवीन होय, सब याही काल विषै जु होय ॥

जब पचम काल करे प्रवेश, मुनि धर्म तणो नही रहे लेश ।
विरले कोई दक्षिण देश माहि, जिन धर्मी नर बहुते जु नाहि ॥

जब षष्ठम काल करे प्रवेश, जब धर्म रच नही रहे लेश ।
दश क्षेत्रन मे रचना समान, जिनवाणी भाष्यो सो प्रमाण ॥

चौबीसी होइके क्षेत्र तीन, दश क्षेत्रनि मे जानो प्रवीन ।
आगत अरु अनागत वर्तमान, सत सात शतक अरु बीस जानि ॥

सब ही महाराज नमूँ त्रिकाल, मम भव सागर तें लेहु निकाल ।
यह वचन हिये में धार लेहु, मम रक्षा करहु जिनेन्द्र [illegible] ॥

'विमल' की विन्ती सुनहु नाथ, मैं पांय परू जुग जोरि हाथ ।
मम वाछित कारज करो पूर, यह अरज हृदय मे धरि जरूर ॥

घत्ता

शत सात जु बीस श्री जगदीश, आगत नागत अरु वर्त तुहैं ।
मन वच तन पूजे सुध मन हूजै, सुरग मुक्ति पद पावत है ॥

ओं ह्री पच मेरु सम्बन्धी दश क्षेत्रनि के विषै तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्योनम. ॥ अर्घं० ॥

———

श्री बीस तीर्थंकर पूजा भाषा

दीप अढाई मेरु पन, अरु तीर्थङ्कर बीस ।
तिन सबकी पूजा करूँ मनवचतन धरि सीस ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

इन्द्र फणीन्द्र नरेन्द्र वद्य, पद निर्मल धारी ।
शोभनीक संसार, सारगुण हैं अविकारी ॥
क्षीरोदधि सम नीरसों (हो), पूजों तृषा निवार ।
सीमन्धर जिन आदि दे, (स्वामी) बीस विदेह मँझार ॥
श्री जिनराज हो भव, तारणतरण जिहाज ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो जन्ममृत्यु विनाशनाय जलं०
(इस पूजा में बीस पुञ्ज करना हो तो इस प्रकार मन्त्र बोलना)
ॐ ह्रीं सीमन्धर - जुगमन्धर बाहु-सुबाहु-संजातक-स्वयंप्रभ ऋषभानन—अनन्तवीर्य—सूरप्रभ—विशालकीर्ति—वज्रधर — चन्द्रानन—भद्रबाहु—भुजङ्गम — ईश्वर — नेमिप्रभ—वीरसेण— महाभद्र—देवयशोऽजितवीर्येति विंशतिविद्यमान तीर्थङ्करेभ्यो जन्म मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

तीन लोक के जीव, पाप आताप सताये ।
तिनको साता दाता, शीतल वचन सुहाये ।

बावन चन्दनसो जजूँ (हो) भ्रमन तपत निरवार।
सीमन्धर जिन आदि दे, (स्वामी) बीस विदेह मँझार ॥२॥

ॐ ह्री विद्यमान विंशतितीर्थङ्करेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदन।

यह ससार अपार, महासागर जिनस्वामी।
तातैं तारे वड़ी, भक्ति नौका जगनामी ॥

तन्दुल अमल सुगन्ध सो (हो), पूजो तुम गुणसार।
सीमन्धर जिन आदि दे, (स्वामी) बीस विदेह मँझार। ३

ॐ ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थङ्करेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षताम्।

भविव-सरोज-विकाश, निद्यतमहर रवि से हो।
जति श्रावक आचार, कथन को, तुमही वड़े हो ॥

फूलसुवास अनेक सो (हो), पूजो मदन प्रहार।
सीमन्धर जिन आदि दे, (स्वामी) बीस विदेह मँझार ॥४

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो कामवाण विध्वसनायपुष्पं।

काम नाग विषधाम, नाशको गरुड कहे हो।
क्षुधा मकादवज्वाल, तास को मेघ लहे हो ॥
नेवज बहुघृत मिष्टसो (हो), पूजो भूखविडार।
सीमधर जिन आदि दे, (स्वामी) बीस विदेह मँझार ॥५

ॐ ह्री विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं।

उद्यम होन न देत, सर्व जगमाँहि भर्यो है।
मोह महातमघोर, नाशपरकाश कर्यो है ॥
पूजो दीप प्रकाश सो (हो), ज्ञान ज्योति करतार।
सीमन्धर जिन आदि दे, (स्वामी) बीस विदेह मँझार ॥६

ॐ ह्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो मोहाधकारविनाशनाय दीप।

कर्म आठ सब काट.—भार विस्तार निहारा।
ध्यान अगनिकर प्रकट सरव कीनो निरवारा ॥

धूप अनूपम खेवतें (हो), दु:ख जले निरधार ।
सीमन्धर जिन आदि दे, (स्वामी) बीस विदेह मँझार ॥७

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूप ।

मिथ्यावादी दुष्ट, लोभ अहङ्कार भरे है ।
सबको छिन म जीत जैन के मेरु खरे हैं ॥

फल अति उत्तम सो जजो (हो), वाछित फलदातार ।
मीमधर जिन आदि दे, (स्वामो) बीस विदेह मँझार ॥८

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्व० ।

जल फल पाठों दर्व अरघकर प्रीत धरी है ।
गणधर इंद्रनहूँ तें थुति, पूरी न करी है ॥

'द्यानत' सेवक जानके (हो) जगतैं लेहु निकार ।
सीमधर जिन आदि दे, (स्वामी) बीस विदेह मँझार ॥९

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तयेअर्घं:निर्व० ।

अथ जयमाला आरती

सोरठा—ज्ञान सुधाकर चन्द, भविक खेतहित मेघहो ।
भ्रमतमभान अमंद, तीर्थङ्कर बीसो नमा ॥

चौपाई १६ मात्रा

सीमधर सीमंधर स्वामी, जुगमधर जुगमधर नामी ।
बाहु बाहु जिन जगजन तारे, करम सुबाहु बाहुबल तारे ॥१

जात सुजात सुकेवल ज्ञान, स्वयंप्रभू प्रभु स्वय प्रधान ।
ऋषभानन ऋषिभानन दोषं, अनंत वीरज वीरज कोषं ॥२

सौरीप्रभ सौरी गुणमाल, सुगुण विशाल विशाल दयालं ।
बज्रधार भव गिरिवज्जर है, चद्रानन चँद्रानन वर हैं ॥३

भद्रवाहु भद्रनि के करता, श्री भुजंग भुजङ्गम हरता ।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजै, नेमिप्रभु जस नेमि विराजें ॥४

वीरसेन वीर जग जानै, महाभद्र महाभद्र वखानै ।
नमो जसोधर जसधरकारी, नमो अजितवीरज बलधारी ॥५

धनुष पाँचसौ काय विराजै, आव कोड़ि पूरव सव छाजें ।
समवशरण शोभित जिन राजा, भवजल तारनतरन जिहाजा ॥६

सम्यक रत्नत्रयनिधि दानी, लोकालोक प्रकाशक ज्ञानी ।
शतइन्द्रनि करि वन्दित सौ है, सुर नर पशु सबके मन मोहै॥७

दोहा—तुमको पूजे वन्दना, करैं धन्य नर सोय ।
"द्यानत" सरधा मन धरै सो भी धरमी होय ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अकृत्रिम चैत्यालयों के अर्घ

कृत्याऽकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान् नित्यत्रिलोकीगतान् ।
वन्दे भावनव्यंतरान्द्युतिवरान्स्वर्गामरावासगान् ॥

सद्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकै: सद्दीपधूपै: फलै: ।
द्रव्यैर्नीरमुखैर्यजामि सततं दुष्कर्मणां शान्तये ॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिजिनबिम्बेभ्योऽर्घं निर्व०

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु, यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वन्दे जिन पुङ्गवानां ॥ २ ॥ अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां वन भवनगतानां दिव्य वैमानिकानां इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥ ३ ॥ जम्बूधातकिपुष्करार्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये

भवाः चन्द्राभोजशिखंडिकंठकनकप्रावृड्घनाभा जिनाः । सम्यग्ज्ञान चरित्रलक्षणधरादग्धाष्टकर्मेन्धनाः । भूतनागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥ ४ ॥ श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बु वृक्षे, वृक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचिके कुण्डले मानुषाके । इष्वाकारेऽजनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके, ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥ ५ ॥ द्वौकुन्देदुनुषारहारधवलौ द्वाविद्रनीलप्रभौ द्वौ बधूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियगुप्रभौ । शेषाः षोडश जन्ममृत्युरहिताः सतप्तहेमप्रभाः ते सज्ञानदिवाकरा सुरनुताः सिद्धि प्रयच्छन्तु नः ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धि कृत्रिमकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्वपा० ।

इच्छामि भंते चेइयभत्ति काउसग्गोकओ तस्सालोचेओ अहलोय तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेयाणि माणि सव्वाणि, तीसुवि लोयेसु भवणवासिय वाणवितरजोयसियकप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुष्फेण दिव्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ह्लाणेण णिच्चकालं अच्चन्ति पुज्जन्ति वन्दन्ति णमस्संति । अहमवि इहसतो तत्थसताइ णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वन्दामि णमस्सामि दुक्खखओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ॥

(इत्याशीर्वाद पुष्पांजलि क्षिपेत्)

अथ पौर्वाह्निक-माध्याह्निक-आपराह्निक देववन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

णमो अरहन्ताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं, णमोउवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं । (९ बार बोलना)

तावकाय पावकम्म दुच्चरियं वोस्सरामि ।

अथ सिद्ध पूजा द्रव्याष्टक

ऊर्ध्वाधोरयुत सबिंदु सपरं ब्रह्मस्वरावेष्टित ।
वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदल तत्सन्धितत्वान्वित ॥
अन्त पत्रतटेष्वनाहतयुत ह्रीकारसवेष्टित ।
देव ध्यायति य. समुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठीरव ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानन । ओ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्ध परमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ ठ. ठ स्थापनं । ओ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् सन्निधिकरणं ॥

निरस्तकर्मसम्बन्धं, सूक्ष्म नित्यं निरामयम् ।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्तमनुपद्रवम् ॥१॥ पुष्पाञ्जली०

सिद्धौ निवासमनुग परमात्मगम्यं,
हान्यादि भावरहितं भववीतकायं ।
रेवापगावरसरोजमुनोद्भवानां
नीरैर्यजेकलशगैर्वरसिद्धचक्रं ॥ १ ॥

ओ ह्रीं सिद्ध चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व० ।

आनन्दकन्दजनकं घनकर्ममुक्तं,
सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननार्तिवीतं ।
सौरभ्यवासितभुवं हरिचन्दनानां,
गन्धैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥२॥

ओ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनम् ।

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं,

– सिद्धम् स्वरूपनिपुणम् कमलम् विशालं ।
सौगंध्यशालिवनशालिवराक्षतानां,
पुञ्जैर्यजे शशिनिभैर्वर सिद्धचक्रम् ॥३॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ।

नित्यस्वदेहपरिमाणनादिसञ्ज्ञं
द्रव्यानिपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् ।
मंदारकुन्दकमलादि वनस्पतीनां,
पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥४॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ।

ऊर्ध्वस्वभावगमनं सुमनोव्यपेत,
ब्रह्मादिबीजसहितं गगनावभासम् ।
क्षीरान्नसाज्यवटकैरसपूर्ण गर्भैं,
नित्यं यजे चरुवरैर्वर सिद्धचक्रम् ॥५॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्ध परमेष्ठिने क्षुधारोगविध्वंशनाय नैवेद्यं ।

आतङ्कशोकभयरोगमदप्रशान्तम्,
निर्द्वन्द्वभावधरण महिमानिवेशम् ।
कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातैः,
दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥६॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ।

पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितांतम्,
त्रैकाल्यवस्तु विषये निविडप्रदीपम् ।
सद्द्रव्यगंधघनसारविमिश्रितानां,
धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥७॥

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं ।

सिद्धासुराधिपतियक्षनरेन्द्रचक्रैः,
ध्येयं शिवं सकलभव्यजनैः सुवन्द्यम् ।
नारिंगपूंगकदलीवरनारिकेलैः,
सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥८॥

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्ध परमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं ।

गंधाढ्यं सुपयोमधुव्रतगणैः संगं वरं चंदनम् ।
पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयम् रम्यं चरुं दीपकम् ॥
धूपं गंधयुतम् ददामि विविधम् श्रेष्ठम् फलम् लब्धये ।
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलम् सेनोत्तरम् वाञ्छितम् ॥९॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं,
सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनन्तवीर्यम् ।
कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्य बीजं,
वंदे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥१०॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घं निर्व॰ स्वाहा ।

त्रैलोक्येश्वरवंदनीयचरणा प्रापुः श्रियम् शाश्वतीं यानाराध्य निरुद्धचण्डमनसः संतोऽपि तीर्थङ्करा । सत्सम्यक्त्व विबोधवीर्य-विशदाऽव्याबाधताद्यैर्गुणैर्युक्तास्तानिह तोष्टवीमि सततम् सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥ (पुष्पांजलि)

अथ जयमाल

विराग सनातनशांत निरंश, निरामय निर्भय निर्मल हंस ।
सुधाम विबोधनिधान विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१

विदूरितसंसृतिभाव निरङ्ग समामृतपूरितदेवविसङ्ग ।
अवधकषाय विहीनविमोह, प्रसीद्ध विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥२

निवारितदुष्कृतकर्मविपास, सदामल केवलकेलिनिवास ।
भवोदधिपारग शांत विमोह, प्रसीद्ध विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥३

अनन्तसुखामृतसागर धीर, कलंकरजोमलभूरिसमीर ।
विखंडित काम विराम विमोह, प्रसीद्ध विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥४

विकारविवर्जित तर्जितशोक, विबोधसुनेत्रविलोकितलोक ।
विहार विराव विरग विमोह, प्रसीद्ध निशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥५

रजोमलखेदविमुक्त विगात्र, निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र ।
सुदर्शनराजित नाथ विमोह, प्रसीद्ध विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥६

नरामरवंदित निर्मल भाव, अनन्तमुनीश्वरपूज्यविहाव ।
सदोदय विश्वमहेश विमोह प्रसीद्ध विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥७

विदभ वितृष्ण विदोष विनिद्र, परात्परशंकरसार वितन्द्र ।
विकोप विरूप विशंक विमोह, प्रसीद्ध विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥८

जरामरणोज्झित वीतविहार, विचिंतित निर्मल निरहंकार ।
अचिंत्यचरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद्ध विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥९

विवर्ण विगंध विमान विलोभ, विमायविकायविशब्दविशोभ ।
अनाकुल केवल सर्व विमोह, प्रसीद्ध विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥१०

घत्ता

असमसमयसारं चारुचैतन्यचिन्हं, परपरणति मुक्तं पद्मनन्दीद्रवंद्यं । निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्योति मुक्तिम् ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा । अर्घं

अथाशीर्वाद अडिल्ल छन्द

अविनाशी अविकार परमरसधाम हो,
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो।
शुध्द बोध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो,
जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ॥
ध्यान अगनिकर कर्म कलक सबै दहे,
नित्य निरञ्जनदेव स्वरूपी ह्वै रहे।
ज्ञायक के आकार ममत्वनिवारिकै,
सो परमातम सिद्ध नमूं सिर नायकें ॥२

दोहा—अविचलज्ञानप्रकाशतैं, गुण अनन्त की खान।
ध्यान धरै सो पाइये, परम सिध्द भगवान ॥ ३

सिद्ध पूजा भाषा

छप्पय

स्वयं सिद्ध जिन भवन रतन मय विंब विराजैं।
नमत सुरासुर भूपदरस लखि रवि शशि लाजै ॥
चार सतक पचास आठ भुवलोक बताये।
जिन पद पूजन हेत धारि भविमगल गाये ॥
मगलमय मगलकरण, शिवपद दायक जानिकैं।
आव्हानन करि कै नमूं सिद्ध सकल उर आनिकै ॥

ॐ ह्री अनतगुणविराजमानसिद्धपरमेष्टिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं अनंतगुणविराजमानसिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः थापन, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं अथाष्टक ॥

चाल नंदीश्वरकी

उज्ज्वल जल शीतल लाय जिन गुण गावत है।
सबसिद्धनको सुचढ़ाय, पुण्य बढावत है ॥
सम्यक्त्व सुक्षायक जान यह गुणपइयतुहै।
पूजौ श्रीसिद्धमहान बलि बलिजइयतुहै ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन (सम्मत, णाण, दसण, वीर्यत्व, सुहमत्र, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, अव्यावाधत्व, अष्टगुण-सहित्ताय) जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्विपामीति स्वाहा ॥ जल ॥

करपूर सुकेशर सार चदन सुखकारी।
पूजो श्रीसिद्ध निहार, आनद मन धारी ॥
सवलोका लोक प्रकाश केवलज्ञानजगो।
इहज्ञानसुगुणसनभास निजरसमाँहिपगो ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणसिद्धपरमेष्ठिने ससारतापविनाशनाय चंदन निर्विपमीति ॥

मुक्ता फल को उन्मान, अक्षत धौय धरै।
अक्षय पद प्रापतिजान पुण्यभंडार भरै॥
जगमेसुपदारथसार ते सब दरसावै।
सो सम्यकदर्शन सार यह गुण मन भावै ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं ॥ ३ ॥

सुंदर सु गुलाब अनूप फूल अनेक कहे।
श्रीसिद्धसुपूजत भूपबहु विधपुण्यलहै ॥

तहावीर्य अनतोसार यह गुनमनआनौं ।
ससार समुद्रतै पार कारक प्रभु जानौ ॥ ४ ॥

ॐ ह्नी णमोसिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिन कामबाणविध्वसनाय पुष्पं निर्विपामीति स्वाहा ॥

फैनी गूझापकवान, मोदक सरस बनें ।
पूजौ श्री सिद्ध महान, भूख विथा जु हने ॥
झलके सब एकहि बार ज्ञेय कहे जितने ।
यह सूक्षमता गुण सार सिद्धन को पूजौ ॥ ५ ॥

ॐ ह्नी णमोसिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिन् क्षुधारोग विनाशाय नैवेद्य निर्विपामीति ॥

दीपक को जोति जगाय, सिद्धन को पूजो ।
करि आरति सन्मुष जाय निरभय पद हूजो ॥
कछु घाटन वाधि प्रमाण, गुरु लघु गुण राखो ।
हम शीस नवावत आन, तुम गुण मुख भाखौ ॥ ६ ॥

ॐ ह्नी णमोसिद्धपरमेष्टिन् दीपं निर्विपामीति स्वाहा ॥ दीप ॥

वर धूप सुदशविधिलाय, दस दिस गंध वरै ।
वसु करम जरावत जाय मानौ नृत्य करै ॥
इक सिद्ध में सिद्ध अनत सत्ता सब पावै ।
यह अवगाहन गुण सत सिद्धन के गावै ॥ ७ ॥

ओ ह्नी णमोसिद्धाण सिद्धपरमेष्टिन् अष्टकर्मदहनाय धू निर्विपामीति स्वाहा ॥

ले फल उत्कृष्ट महान सिद्धनि कौं पूजौ ।
लहि मोक्ष परम सुख थांन प्रभु तुम सम हूजौ ॥

यह गुण वाधाकर हीन, वाधा नाश भई।
मुख अव्यावाध सुचीन, शिव सुंदरसुलई ॥८॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाण सिद्धपरमेष्ट्रिन् महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्विपामीति स्वाहा ।।

जल फल भरि कंचन थाल अरचन कर जोरी।
तुम सुनियो दीनदयाल विनती है मोरी॥
करमादिक दुष्ट महान इनको दूर करो।
तुम सिद्ध महा सुख दान, भव भव दुख हरो॥९॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाण सिद्ध परमेष्टिन सर्वसुखप्राप्तये अर्घं निर्विपामीति स्वाहा॥

जयमाला

नमो सिद्ध परमात्मा, अद्भुत परम रसालं।
तिन गुण अगम अपार है, सरस रचो जयमाल॥

छंद पद्धरी

जय जय श्री सिद्धन को प्रणाम जय शिव सुख सागर के सुधाम।
जय वलि वलि जात सुरेश जान, जय पूजत तनमन हरप आंन॥

जय क्षायक गुन सम्यक्त्व लीन, जय केवल ज्ञान सुगुण नवीन।
जय लोकालोक प्रकाशवान, यह केवल अतिशय हिये आन॥

जय सरव तत्व दरसै महान, सोई दरसन गुणतीजो सुजान।
जय वीर अनन्तो है अपार, जाकोपट तर दूजो न गार॥

जय सूक्ष्मता गुण हिये धार, सब ज्ञेय लखे एकहि सुवार।
इक सिद्ध मे सिद्ध अनन्त जान, अपनी अपनी सत्ता प्रमान॥

अवगाहन गुण अतिशय विशाल, तिनके पद वंदी नमत भाल।
कछु घाटि न वधि कहै प्रमाण, सो अगुरु लघु गुण धर महान॥

जय बाधा रहित विराजमान, सोही अव्याबाध कही बखान ।
ए बसु गुण है व्यवहार सत, निहचै जिनवर भाखै अनन्त ॥
सब सिद्धन के गुण कहे गाय, इन गुण कर सोभित है बनाय ।
तिनिको भवि जन मन वचन काय, पूजत बसुविधि अति हरष लाय ॥
सुरपति फणपति चक्री महान, बलहरि प्रतिहर मनमथ सुजान ।
गणपति मुनिपति मिलि धरत ध्यान जय सिद्धशिरोमणि जगप्रधान ॥
ऐसे सिद्ध महान, तिन गुण महिमा अगम हैं ।
बरनन कह्यो बखान तुच्छ बुद्धि भविलालजू ॥

ॐ ह्री णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्टिन् सर्व सुख प्राप्तये महार्घं निर्विपामीति स्वाहा ।

करता की यह वीनती सुनो सिद्ध भगवान् ।
मोहि बुलावो आप ढिग यही अरज उर आन ॥ १२ ॥

इत्याशीर्वाद

समुच्चय चौबीसी जिनपूजा

छन्द कविदत्त ।

वृषभ अजित संभव अभिनन्दन सुमति पदम सुपार्स जिनराय ।
चन्द्र पुहुप शीतल श्रेयांस नमि, वासुपूज्य पूजित सुरराय ॥
विमल अनन्त धरम जस उज्ज्वल शांतिकुंथुअर मल्लि मनाय ।
मुनि सुव्रत नमि नेमि पार्श्व प्रभु, वर्द्धमान पद पुष्प चढ़ाय ॥१॥

श्री १०५ ऐलक कीर्तिसागर जी महाराज
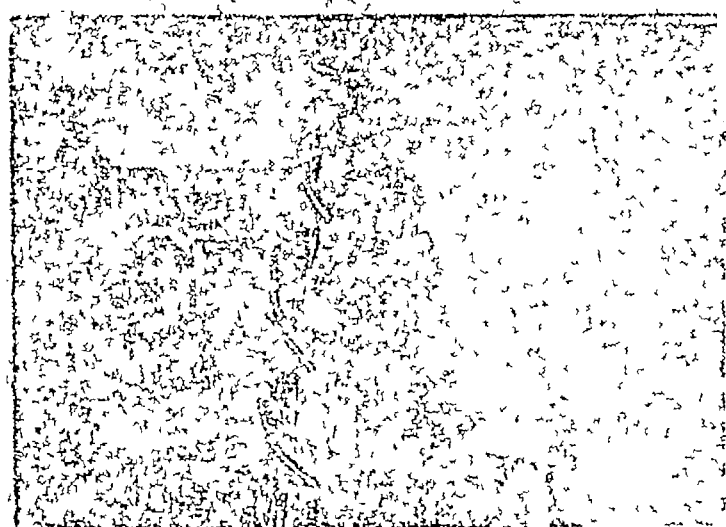
संक्षिप्त जीवन परिचय:—(जन्म) आगरा जिला के परगना फीरोजाबाद में नगुराती ग्राम श्री सेठ चुन्नीलाल जी परैया (जैसवाल) एवं माता पूरन देवी जी के शुभ मिती कार्तिक शुक्ल १४ वि. सं. १९६४ को आपका जन्म हुआ और उस समय श्री मोतीलाल जी के नाम से विभूषित हुए।

बचपन एवं शिक्षा:—दश वर्ष की आयु में माता की ममता तथा साढ़े तेरह वर्ष की आयु में पिता के प्यार से वंचित होगये एवं आर्थिक दशा ठीक न होने से दूसरी कक्षा तक ही शिक्षा प्राप्त कर सके।

गृह त्याग:—बाल्य काल में ही माता-पिता का सहारा टूट चुका था। असहाय अवस्था में कुटुम्बियों तथा सम्बन्धियों के आश्रित रहकर अर्थोपार्जन किया, परन्तु आप सांसारिक दुख बन्धनों में न फस सके और सिद्ध क्षेत्र सोनागिर जी में श्री १०८ मुनि जम्बू सागर जी से चैत्र कृष्णा ३ सं० १९९९ को दर्शन विशुद्धि की दीक्षा ग्रहण कर गृह त्याग किया। उज्जैन में द्वितीय-प्रतिमा की दीक्षा श्री १०८ आचार्य सूर्यसागर जी से फाल्गुन शुक्ला [illegible] सं० २०[illegible] को ग्रहण की। लश्कर में श्री १०८

मुनिराज विमलसागरजी से अषाढ़ शुक्ल ३ को पाचवी प्रतिमा तथा केवल ११ दिन वाद ही अषाढ़ शुक्ला १४ स० २००८ को सातवी प्रतिमा की दीक्षा ग्रहण की।

क्षुल्लक एवं ऐलक:—आपके गहन तप और त्याग से प्रभावित होकर श्री १०८ मुनिराज विमलसागर जी ने अंदेश्वर पार्श्वनाथ बांसवाडा राजस्थान मे अगहन कृष्ण १४ सं० २०१३ को क्षुल्लक पद की दीक्षा से दीक्षित किया तथा इटावा उ० प्र० मे उक्त मुनिराज ने ज्येष्ठ कृष्ण ८ स० २०२० को ऐलक पद की दीक्षा दी। आपने इस वर्ष (सं० २०२०) इस नगरी मे रहकर, अन्य ब्रह्मचारी तथा त्यागियों के साथ चतुर्मास सम्पन्न किया। आपके प्रभाव से यहां धार्मिक प्रभावनाओं मे उल्लास और उत्साह की धारा प्रवाहित होती रही।

त्याग मूर्ति श्री ब्रह्मचारी श्री गेंदालाल जी

आपने पूज्य श्री १०५ ऐलक जी महाराज के साथ इस नगरी में चतुर्मास व्यतीत किया तथा इसके पूर्व भी आपने समय-समय पर इस नगरी मे पधार कर धर्म प्रेमियो को धार्मिक प्रवृत्ति से प्रोत्साहित किया। आपका यहा के धर्म प्रेमियो से अत्यन्त प्रगाढ स्नेह है।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र अवतर अ०
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र तिष्ठ. तिष्ठ:
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिन समूह ! अत्र मम सन्नि०

(चाल—द्यानतरायकृत नंदीश्वरद्वीपाष्टक की तथा गर्भराग आदि अनेक चालों में)

मुनिमन सम उज्जवल नीर, प्रासुक गन्ध भरा।
भरि कनक कटोरी धीर, दीनी धार धरा॥
चौबीसौं श्री जिनचन्द, आनन्द कन्द सही।
पदजजत हरत भवफन्द, पावत मोक्ष मही॥१॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्व०

गोशीर कपूर मिलाय, केशर रंग भरी।
जिन चरनन देत चढ़ाय, भव आताप हरी॥चौ० २॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तेभ्यो भवतापविनाशनाय चंदन निर्व०॥

तन्दुल सित सोम समान, सुन्दर अनियारे।
मुकताफल की उनमान, पुञ्ज धरौं प्यारे॥ चौ० ३॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् निर्व०॥

वरकंज कदंब कुरंड, सुमन सुगंध भरे।
जिन अग्र धरों गुणमंड, काम कलंक हरे॥ चौ० ४॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्प निर्व०॥

मन मदन मोदक आदि, सुन्दर सद्य बने।
रसपूरित प्रासुक स्वाद, जजत क्षुधादि हने॥ चौ० ५॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व०

तमखडन द्रीप जगाय, धारौं तुम आगें।
सब तिमिरमोह क्षय जाय, ज्ञानकला जागै ॥ चौ० ६॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरातेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप नि० ॥

दसगध हुताशन माहि, हे प्रभु खेवत हो।
मिस धूम करम जरि जाहि, तुम पद सेवत हो ॥चौ०७॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरातेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूप० निर्वपामी० ॥

शुचिपक्वसरम फल सार, सब ऋतुके ल्यायो।
देखत दृगमन को प्यार, पूजत सुख पायो ॥चौ० ८॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरातेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामी०॥

जल फल आठो शुचिसार, ताको अर्घकरो।
तुमको अरपो भवतार, भव तरि मोक्ष वरो॥
चौवीसों श्रीजिनचद, आनन्दकन्द सही।
पदजजत हरत भवफद, पावत मोक्ष मही॥ ९।

ॐ ह्री श्रीवृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घ पदप्राप्तये अर्घं।

जयमाला।

श्रीमत तीरथनाथपद, माथ नाय, हितहेत।
गाऊँ गुणमाला अबै, अजर अमर पद देत॥१

छन्द घत्तानन्द

जय भवतम भजन जनमनकजन। रँजन दिन मनि स्वच्छ करा।
शिव मग परकाशक, अरिगण नाशक चौवीसो जिनराज वरा॥२

छन्द पद्धरी

जय रिषभदेव रिषिगन नमत, जय अजित जीत वसुअरि तुरंत।
जय संभव भव भय करत चूर, जय अभिनँदन आनँदपूर ॥३

जय सुमति सुमतिदायक दयाल, जयपद्म पद्मदुति तनरसाल।
जय जय सुपास भवपास नाश, जय चँद चँदतनदुति प्रकाश ॥४

जय पुष्पदँत दुतिदत सेत, जय शीतल शीतल गुननिकेत।
जय श्रेयनाथ नुत सहसभुज्ज, जय वासवपूजित वासुपुज्ज ॥५

जय विमल विमल पददेनहार, जय जय अनन्त गुनगन अपार।
जय धर्म धर्म शिव शर्म देत, जय शांति शांति पुष्टि करेत ॥५

जय कुन्थ कुन्थवादिक रखेय, जय अर जिन वसुअरि छय करेय।
जय मल्लि मल्ल हतमोहमल्ल, जय मुनिसुव्रत व्रतशल्लदल्ल ॥६

जय नमि नित वासवनुत समेप, जय नेमिनाथ वृषचक्रनेम।
जय पारसनाथ अनाथनाथ, जय वर्द्धमानशिवनागर साथ ॥८

छन्द घत्तानन्द

चौबीस जिनंदा आनंदकंदा, पापनिकंदा सुखकारी।
तिनपद जुगचंदा उदय अमंदा, वासव वंदा हित धारी ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सोरठा।

मुक्ति मुक्ति दातार, चौबीसों जिन राजवर।
तिनपद मनवचधार, जो पूजै सो शिव लहै ॥१॥

इत्याशीर्वादः।

रविव्रत पूजा

अडिल्ल

यह भविजन हितकार, सु रविव्रत जिन कहीं ।
करहु भव्यजन लोक सुकन देके सही ॥
पूजो पार्श्व जिनेन्द्र त्रियोग लगाय के ।
मिटैं सकल सन्ताप मिले निधि आय के ॥
मतिसागर इक सेठ कथा ग्रन्थन कही ।
उन्होंने यह पूजा कर आनन्द लहीं ॥
तातें रविव्रत सार, सो भविजन कीजिये ।
सुख सम्पति सन्तान अतुल निधि लीजिये ॥

दोहा—प्रणामो पार्श्व जिनेश को, हाथ जोड सिर नाय ।
परभव सुख के कारने पूजा करूँ वनाय ॥
ऐतवार व्रत के दिना एही पूजन ठान ।
ता फल स्वर्ग सम्पति लहै, निश्चय लीजे मान ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र । अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठ प्रतिष्ठापनम् । अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम् ।

अष्टक

उज्जवल जल भर कर अति लायो रतन कटोरन माहीं ।
धार देत अति हर्ष बढावत जन्म जरा मिट जाहीं ॥
परसनाथ जिनेस्वर पूजो रविव्रत के दिन भाई ।
सुख सम्पति बहु होय तुरत आनन्द मगलदाई ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

मलयागिर केशर अति सुन्दर कुंकुम रङ्ग बनाई ।
धार देत जिन चरन आगे भव आताप नशाई । पारस० । चंदनं २

मोती सम अति उज्वल तन्दुल ल्यायो नीर पखारो ।
अक्षय पद के हेतु भावसो श्री जिनवर ढिग धारो । पारस० अक्षतं ३

केला अर मचकुन्द चमेली पारिजात के ल्यावो ।
चुन चुन श्री जिन अग्र चढाऊं मनवाछित फल पावो ॥

पारसनाथ जिनेश्वर पूजो रविव्रत के दिन भाई ।
सुख सम्पत्ति बहु होय तुरत हो आनन्द मगलदाई ॥ पुष्प ॥

वावर फेनी गूंजा आदिक घृत मे लेत पकाई ।
कञ्चन थार मनोहर भर के चरनन देत चढाई ॥पारस० नैवेद्य

मणिमय दीप रतन मय लेकर जगमग जोति जगाई ।
जिनके आगे आरति करके मोह तिमर नश जाई । पारस० दीप

चूनकर मलयागिर चन्दन धूप दशाङ्ग बनाई ।
तट पावक मे खेन भावसो कर्म नाश हो जाइ ॥ पारस० धूपं

श्रीफल आदि बदाम सुपारी भांति भांति के लावो ।
श्रीजिनचरण चढाय हरस कर तात शिवफल पावो ॥ पारस० फलं

जल गन्धादिक अष्ट दरव ले अर्घ बनाओ भाई ।
नाचत गावत हर्ष भावसो कचन थार भराई ॥ पारस० । अर्घं ।

गीतिका छन्द

मन वचन काय विशुद्ध करके पार्श्वनाथ सुपूजिये ।
जल आदि अर्घ बनाय भविजन भक्तिवन्त सुहूजिये ।
पूज्य पारस नाथ जिनवर सकल सुख दातार जी ।
जै करत हैं नरनार पूजा लहत सुक्ख अपार जी ॥ पूर्णार्घं

जयमाल

दोहा – यह जग मे विख्यात है, पारसनाथ महान।
जिन गुण की जयमालिका, भासा करो बखान॥

पद्धरी छन्द

जय जय प्रथमो श्री पार्श्वदेव, इन्द्रादिक तिनकी करत सेव।
जय जय सु बनारस जन्म लीन, तिहुँलोक विषै उद्योत कीन॥

जय जिनके पितु श्री विस्वसेन, तिनके घर भए सुख चैन एन।
जय बामीदेवी मातजान, तिनके उपजे पारस महान॥२

जय तीन लोक आनन्द देन, भविजन के दाता भए एन।
जय जिनके प्रभु की शरण लीन। तिनक सहाय प्रभुजी सो कीनी॥

जय नाग नागनी भए अधीन, प्रभु चरन लाग रहे प्रवीन।
तजके सो देह स्वर्ग सुजाय, धरणेयन्द्र पद्मावति भये आय॥४

जे चोर अञ्जन अधम जान, चोरी तज प्रभु को धरैं ध्यान।
जे मतिसागर इक सेठ जान, जिन रविव्रत पूजा करी ठान॥५

तिनके सुत थे परदेशमाहि, जिन अशुभ कर्म काटे सु ताहि।
जे रविव्रत पूजन करी सेठ, ता फलक सबसे भई भेट॥६

जिन जिनने प्रभु का शरण लीन, तिन रिद्ध सिद्ध पाई नवीन।
जे रविव्रत पूजा करहि जेय, ते सुक्ख अनन्तानन्त लेय॥७

धरणेन्द्र पद्मावति हुए सहाय, प्रभु भक्ति जान ततकाल जाय।
पूजा विधान इहि विधि रचाय, मन वचन काय तनो लगाय॥८

जो भक्तिभाव जयमाल गाय, सो ही सुख सम्पत्ति अतुल पाय।
बाजत मृदङ्ग बीनादि सार, गावत नाचत नाना प्रकार॥९

तन नन नन नन नन ताल देत, सन नन नन नन सुर भर सुलेत ।
ता थेई थेई थेई पग धरत जाय, छमर छमर घुंघरू बजाय ॥१०
जे करहिं निरत इहि भाँति भाँति, ते लहहिं मुख्य शिवपुर सुजान ।

दोहा—रविव्रत पूजा पार्श्व की, करे भविक जन कोय ।
सुख सम्पति इह भव लहै, तुरत सुरग पद कोय ॥

॥ पूर्णार्घम् ॥

अडिल्ल

रविव्रत पर्श्व जिनेन्द्र पूज्यभा मन धरे ।
भव भव के आताप सकल छिन मे टरे ॥
होय सुरेन्द्र नरेन्द्र आदि पदवी लहै ।
सुख सम्पति सन्तान अटल लक्ष्मी रहै ॥
फेर सब विघ पाय भक्ति प्रभु अनुसरै ॥
नाना विधि सुख भोग बहुरि शिव तियवरै ॥

इत्या शिर्वाद.

रविव्रत जाप्यमन्त्र

ॐ नमो भगवते चिंतामणिपार्श्वनाथाय सप्तफणमंडिताय ॐ ह्रीं श्री धरणेन्द्र पद्मावती सहितायमम ऋद्धि सिद्ध वृद्धि सौख्यं कुरु कुरु स्वाहा । (१०८ लवङ्ग से जाप्य करे प्रत्येक मत्र पर अग्नि मे लौंग छोडे) ।

श्री वीर निर्वाण-दीपावली पूजा

दोहा —नमो चरमजिन चरण युग, नाथ वश वर पाय।
सिद्धारथ त्रिमला तनुज, हमपर होय सहाय ॥ १

ॐ ह्रीं श्री जिन निर्वाण यन्त्रस्योपरिपुष्पाजंलि क्षिपेत् ।

अडिल्ल—पुष्पोत्तर तजि यान धवल छट पाढ की ।
उतर फालगुन नखत वसे उर माया की ।
अवधि विबुध पति जान रतन बरसाइये ।
कण्डलपुर हरि आय सुमङ्गल गाइये ॥ २

ॐ ह्रीं गर्भ कल्याणक प्राप्ताय अन्तिम जिनेन्द्राय अर्घम् ।

दोहा—दिवस पञ्चदस कास वसु, वरस पिछत्तर सार ।
रहे चतुर्थ काल के वीर लियो अवतार ॥ ३

सुन्दरी छंद—शुक्ल चैत त्रियोदशि के दिना ।
नखत उत्तर फाल्गुण सरगण ॥
साज राजेन्द्र गिरीन्द्र न्हवाइयो ।
लाख जिनेन्द्र सुमङ्गल गाइयो ॥ ४

दोहा—पञ्चानन पग चिह्न तिन उतङ्गकर सात ।
वरन हेम प्रतिबिम्व जिन, पूजऊ भव्य प्रभात ॥५

ॐ ह्रीं जन्म कल्याणक प्राप्ताय अंतिम जिनेन्द्राय अर्घम् ।

अडिल्ल—आयु बहत्तर वष कुवर पद तीस जू ।
सो लखि अथिर उदास भए जगदीश जू ॥
तब लौकांतिक देव स्तुति कर थल गये ।
पुनि सर तुरिय नवन करि प्रभु शिव का लये ॥६

पुर तैं निकट न दूर मनोहर वन गये।
चद्रकात मणिमायी शिला लखि सुर ठए ॥
तहाँ पधराय पालकी ते सुरगण खड़े ।
दुविध परिग्रह त्याग प्रभु समरस बड़े ॥ ७

प्राची दिश सम्मुख पद्मासन धारि कैं ।
नमः सिद्ध' कहि पञ्च मुष्ठि कच फारिकै ॥
निज आतम अरु सिद्ध सभी को साखि दे ।
त्रियदश बिध चारित्र धरयो अभिलाप दे ॥ ८

मँगसिर मास दसैं सुनि जन्म नखत पर्‌यो ।
ता दिन परम दिगम्बर पद प्रभुजी धर्‌यो ॥
साल तरू नृप एक बेर अपराहिनी ।
दिक्षा सखा मिलाय बधू शिव दाहिनी ॥९

दोहा जिन सिर केश पवित्र अति, रत्न पिटारे धारि ।
क्षीर समुद्र पधराय हरि, निज थल गये नुति कारि ॥१०

ॐ ह्रीं तप कल्याणक प्राप्ताय अंतिम जिनेन्द्राय अर्घम् ।

दोहा—तनममत्वतजि विश्वपति, शिलापट्ट वर पाय ।
आरूढ़े तप धरत ही, तुरियं ज्ञान उपजाय ॥११
अक्षर अखण्ड अव्यक्त जो, अजपा ताकूँ ध्याय ।
ध्यान सिद्धि के अर्थ प्रभु, अचल मेरु सम थाय ।१२

अडिल्ल—गुप्ति तीन गढ तुल्य भई तिनके महा ।
सयम बखतर तुल्य भयो कहना कहा ॥
कर्म शत्रु जीतन इच्छा लागी तबै ।
गुण अनेक सेना-भट होत भये जबै ।

चाल मङ्गल—करत विहार जिनेश भवनि उपदेश ते ।
सकल सङ्घ करियुक्त चरम तीर्थेश ते ॥
नाना विधि अतिशय करि युक्त प्रभु तहाँ ।
आन विराजे अति विपुलाचल पर्वत जहाँ ॥
जहां दिव्य ध्वनि प्रति शब्द जय जय सभा मण्डप अविन मे ।
धर्मोपदेश सुनायो तिन निकट निर्वाणक समै ॥
तब सुर असुर नरिन करि अर्चित शिवगम माहिं जान कै ।
पाँवापुरी उद्यान सर तहाँ पधारे आन कै ॥ १९ ॥

पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्

॥ इति पीठिका विधानम् ॥

अथ पूजा

दोहा—जास समय महावीर ने, कियो गमन शिव हेत ।
सोयउ समय विचार कै, पूजउ सुधी सुहेत ॥२०

ॐ ह्री श्री वीर महावीर, अतिवीर सन्मति, बर्द्धमानादिक अनेक नाम संयुक्ताय अत्रावतर अवतर सवौषट् आह्वाननं अत्र तिष्ठ ठः ठः प्रतिष्ठापनं, अत्र मम सन्नि ितो भव भव वषट् सन्निधिकरण ।

चाल मगल आरती

मगल निर्वाणक महावीर, प्रात समय जजिये भवि धीर ॥टेक
दश अतिशय जनमत जिन राय, केवल ज्ञान माहि दश गाय ;
तिनजिनवर प्रति चरण ओर, देजलधार जुगलकर जोर ॥ मगल०
ॐ ह्रीं निर्वाण कल्याणक प्राप्ताय अन्तिक जिनेन्द्राय जलं ॥१

जिनके सुरकृत चौदह सार, सब अतिशय चौंतीस चितार।
तिनजिनवर प्रति पूजनधार, भँवर लुब्धवर चन्दन सार ॥ मंगल०

ॐ ह्री निर्वाण कल्याणक प्राप्ताय अंतिम जिनेन्द्राय चंदन ॥ २

प्रातिहार्य अरु युत जिनदेव, जिनकी इन्द्र करे सत सेव।
तिन जिनवरको नित अवलोक, ले वरसाल अखण्डित ढोक ॥ मंगल०

ॐ ह्री निर्वाण कल्याणक प्राप्ताय अंतिम जिनेन्द्राय अक्षत ॥ ३

जिनके अनन्तचतुष्टय सार, ये गुण छ्यालीस जगतार।
तिन जिनवर प्रति पूजन सार, लेवर सुमन विविध प्रकार। मंगल०

ॐ ह्री निर्वाण कल्याणक प्राप्ताय अन्तिम जिनेन्द्राय पुष्पं ॥

क्षुधा तृषादि अठदश दोष, रहित शिवगवर भव दधि शोष।
तिन जिनवर प्रतिबिंब निहार, पूजन को भर नेवज थार ॥ मंगल

ॐ ह्री निर्वाण कल्याणक प्राप्ताय अंतिम जिनेन्द्राय नैवेद्य ॥

लोक अलोक भेद भिन गाय, जीव अजीव तत्व दरसाय।
तिन प्रतिबिंब निरखनिज हेत, दीपक लेय जजो भविचेत ॥ मंगल

ॐ ह्रीं निर्वाण कल्याणक प्राप्ताय अन्तिम जिनेन्द्राय दीपं ।

मिथ्या भ्रम कर भ्रमे अनादि, जगत जीव अग मे बहु वादि।
तिनको शिवमग सार बताय, नितप्रति धूप दशांग चढाय ॥ मंगल

ॐ ह्री निर्वाण कल्याणक प्राप्ताय अन्तिम जिनेन्द्राय धूप ॥

जिन वृष उपदेश्यो हित कार, चल्यो जात अब ताई सार।
परमत खडन मडन लोक, तिन प्रति फलते चरणन धोक ॥ मंगल

ॐ ह्री निर्वाण कल्याणक प्राप्ताय अन्तिम जिनेन्द्राय फल ॥

जिनके समोशरण मे साथ, चौदह सहस एक दस बाघ।
ऐसे जगतराय पति पाय, ले जल आदि जजो तिन पाय ॥ मंगल

ॐ ह्री निर्वाण कल्याणक प्राप्ताय अन्तिम जिनेन्द्राय अर्घ ॥ ६

राग विलावल-प्रकृति सात अन्तिम प्रभु जिन प्रथम विदारी ।
तीन आठ पै भानि कै नव छतीस धारी ॥
दसमे लोभ द्वादशै सोलह तहं टारी ।
त्रैसठ प्रकृति खिपावो तिन जिन बलिहारी ॥

ॐ ह्रीं निर्वाण कल्याणक प्राप्ताय अन्तिम जिनेन्द्राय पूर्णार्घं ॥ १०

दोहा—सैंतालीस प्रकृति हनि, कर्म घातियानि कीर ।
नाम तीन दस आयुत्रय, नाशत भये महावीर ॥ ११

जयमाल

दोहा—पञ्च नाम धरतेश गुरु, पावापुर बन आय ।
शेष कर्म रिपु जीतने, शिव को चलन उपाय ॥ १

त्रोटका—आय तहँ त्रिजगपति ध्यान दीन्हों महा ।
तृतिय पद शुक्ल मांडयो सुहावन तहा ॥
तब प्रभु दिव्य ध्वनि शब्द रहिते भये ।
अन्त के दिवस बाकी चतुर्दश रहे ॥२

प्रभु गये उलघ तेरम गुणथान तैं ।
चढि अजोगें शुक्ल तुरिय पद ध्यान तैं ।
जोग सुनिरोध करि चरम युग समय जे ।
हनि बहत्तर चरम समय तृयोदश यजे ॥३

चौदमे अन्त जु अघातिया जय लए ।
चेतना शक्ति दैदीप्य परगट भए ॥
भांति इह अष्ट अरि कर्म दल हनि ठये ।
ऊर्ध्व जिन गमन करि शिवपुरी फिर भये ॥४

पक्षवर भ्रमर कातिक चतुर्दशि दिना ।
स्वाति वर नखत परभात समया गिना ॥

लोक के शिखर जिन देव आरूढियो ।
सुख अनतो निरंतर जहां पूरियो ॥५

माह अरि बीसवसु प्रकृति युत क्षय कियो ।
प्रथम क्षायक सम्यकत्व गुण प्रगटियो ॥
तव अनन्तो दुतिय ज्ञान गुण पूरियो ॥६

दरशनावरण नव प्रकृति युत दल मल्यो ।
तव अनन्तो सुदर्शन तृतीय गुण मिल्यो ॥

अन्तराय कर्म पचभट युत हन्यो ।
तव तुराय वीर्य गुण वाजन अनन्तो वन्यो ॥७

पद्धडी छन्द

इकतोत्रिम भाट युत नाम मारि, पचम सूक्ष्म गुण प्रगति सारि । षट कटक सहित करि आयु नाश, छट्टम अवगाहत गुण प्रकाश ॥८॥ हनि गोत कर्म की जोट ताय, सातम जु अगुरु लखि गुण उपाय । जिन जुगल वेदनी घात पाय गुण अष्टम अव्याबाध आय ॥९॥ इम आदि अनन्त गुण समाज, पायो प्रभु मुक्ति पुरी सुराज । तब हीं सुरेशवल अवधि पाय, जिनसैन आदि सब देव आय ॥१०॥ ता दिन वह पुरी प्रकाश रूप, दीपनि समूह करिकै अनूप । धरती आकाश सब दिसनि माहि दीपनि माला प्रज्व-लित लखाहि ॥११॥ तव परमौदारिक प्रभु शरीर, मगल पचम लखि सुर गहीर । शुभ गन्ध पुहुप आदिक मनोग, द्रव्यनि करि प्रभु पूजा नियोग ॥१२॥ फिर चन्दन अगरादिक सुलाय, तव वर उतग सर सुर रचाय । जिन तन मगलमय तहँ सचाय, तव अग्नि कुमारनि शीश नाय ॥१३॥ तिनि मुकटनि कर ज्वाला उठाय, भस्मीकृत सर सब पूत थाय । तब सुर जय जय जय करत घोर, आनन्द परम जु भक्ति भोर ॥१४॥ तव प्रथम इन्द्र आदिक

सुराय, करि भस्म वन्दना शीश नाय। कहते यह पुरुषोत्तम महान् वर धर्म तीर्थ नायक जहान ॥ १५ ॥ सो देख्यो अस्त भये दिनेश, अब मिथ्या तम भ्रम करि प्रवेश। ये प्राणी वृष ते विमुख होय, करि कै निज इच्छा मार्ग सोय ॥१६॥ जगमे सु प्रवर्तै गे विशाल, इम पश्चित् सुर गणभक्ति माला। अपनी पवित्र लखि अमर राय, फिर पूजा करि निज थान जाय। १७ ॥ या दिन तैं या भरत खेत, दीपमालि परसिव उपेत। प्रति वर्ष भव्य पूजा कराय, निर्वाण समय उत्सव सु पाय ॥ १८ ॥ पीछे सुर नर नारिन समाज, कर मोदक ले परिवार साज। अति आनन्द मंगल निरत सोय, कीन्यो तिन आय कहै सुकोय ॥ १९ ॥ ते सन्मति मति दे अरज येह तुम करुण सागर विमल मेह। भटक्यौ बहुकाल अनन्त वादि तुम बिन कृपाल जग मे न वाद ॥ २०

अडिल्ल—या भव वन मे नाथ बहुत दुख पायो।
जानत ज्ञान थकी तुम हो तट आइयो।
तातें कहने माहि कछू आवे नही।
वांछितार्थ पद तुम पद करि प्रभु पाऊँ सही ॥२१॥

ॐ ह्रीनिर्वाण कल्याणक प्राप्ताय अन्तिम जिनेन्द्राय महा र्घं ।

गीता छन्द

या भांति निर्वाणक सु उत्सव करत भक्ति जुत्त सही।
सो नय प्रमाणक न्याय कर, सुप्रमाण है वह विधि सही॥
यहसमय लख जिन पूज उत्सव करत भक्ति जुत्त सही।
दुर्गति हरन सुख हेत भविकर, ये परम रुचिकर ठही ॥२२

दोहा—तीन वरस वसु मास दिन, पन्द्रह रहे जु सार।
श्री सन्मति शिवपुर बसे, चौथे काल मँझार। २२

जाप:— पूर्णार्घ

"ॐ ह्रौ निर्वाण कल्याणक युक्ताय अन्तिम जितेन्द्राय नमोनमः"

इति श्री वीर निर्वाण (दिवाली) पूजा।

निर्वाण क्षेत्र पूजा

सोरठा—परम पूज्य चौबीस, जिहँ-जिहँ थानक शिव गये।
सिद्ध भूमि निशदीस, मनवचतन पूजा करौं ॥ १

ॐ ह्रीं चतुर्विशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं चतुर्विशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र तिष्ठ । तिष्ठ ठ ठः ।
ॐ ह्रीं चतुर्विशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट्

गीता छन्द

शुचि छीरदधि सम नीर निरमल, कनक झारी मैं भरौं।
संसार पार उतार स्वामी, जोरकर विनती करौं ॥
सम्मेदगढ गिरनार चम्पा, पावापुरि कैलापको।
पूजो सदा चौबीसजिन निर्वाण भूमिनिवासको ॥ २

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं ॥ १

केशर कपूर सुगन्ध चन्दन सलिल शीतल विस्तरौं ।
भवतापको संताप मेटो, जोरकर विनती करौं ॥ समेद० ॥ २

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो चंदनं ॥ २

मोती समान अखण्ड तन्दुल, अमल आनन्दधरि तरौं।
औगुन हरौ गुन करो हमको जोरकर विनती करो ॥ समेद० ॥ ३

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विशतितीर्थंकरनिर्वाण क्षेत्रेभ्यो अक्षतान् नि० । ३

शुभ फूलरास सुवासवासित, खेद सब मन की हरौं ।
दुखधामकामविनास मेरो, जोरकर विनती करौं ॥ समेद० ॥ ४

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो पुष्पं नि० ॥ ४ ॥

नेवज अनेक प्रकार जोग, मनोग धरि भय परिहरौ ।
यह भूखदूषनटार प्रभुजी जोरकर विनती करौं ॥ समेद० ॥ ५

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्य नि० ॥ ५ ॥

दीपक प्रकाशउजास उज्जवल, तिमिर सेती नहिं डरौं ।
संशयविमोहविभर्मतमहर, जोरकर विनती करौं ॥समेद०॥६

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीप ॥६

शुभ धूप परमअनूप पावन, भावपावन आचरौं ।

सब करम पुन्ज जलाय दीजे, जोरकर विनती करौं ॥संमेद०॥७

ॐ ह्री चतुर्विंशतितीथकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं ॥७॥

बहुफलमँगाय चढाय उत्तम, चार गतिसो निरबरौं ।
निहचै मुकतिफलदेहु मोको, जोरकर विनती करौं ॥समेद०॥८

ॐ ह्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो फल निर्वपामीति

जल गंध अक्षत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं ।
'द्यानत' करो निरभय जगत सो, जोरकर विनती करौं । समेद०।९

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति

जयमाल

सोरठा—श्री चौबीसजिनेश, गिरिकैलाशादिकनमे ।
तीरथ महाप्रदेश, महापुरुष निरवाणतैं ॥

नमो ऋषभ कैलासपहारं नेमिनाथ गिरनार निहार ।
वासुपूज्य चम्पापुर बदौ । सनमति पावापुर अभिनदौं ॥२
बदौं अजित अजितपददाता । बदौ संभव भवदुखघाता ।
बदौं अभिनन्दन गणनायक । बदौ सुमति सुमतिके दायक ॥३
बन्दौ पदममुकति पदमाकर । बन्दौ सुपास आशपासाहार ।
बन्दौ चन्द्रप्रभु प्रभुचन्दा । बन्दौं सुबिधि सुबिधिनिधिकन्दा ॥४
बन्दौं शीतल अघतपशीतल । बन्दु श्रेयाँस श्रेयांस महीतल ।
बन्दौ विमल विमल उपयोगी । बन्दु अनत अनत सुखभोगी ॥५
बन्दौ धर्म धर्म विस्तारा । बन्दौ शान्ति शान्ति मनधारा ।
बन्दौ कुन्थुकुन्थु रखवाल । बन्दौ अर अरिहर गुणमालं ॥ ६

बन्दौ मल्लि काममज चूरन। बन्दौ मुनिसुव्रत व्रतपूरन।
वन्दौं नमि जिननमित सुरासुर। बन्दौ पास पास भ्रमजरहर ॥७

बीसौ सिद्ध भूमि जा ऊपर। शिखर सम्मेदमहागिरि भूपर।
एक वार बन्दै जो कोई। ताहि नरकपशुगति नहि होई॥ ८

नरगतिनृप सुरसक्र कहावै। तिहु जग भोगभोगिशिव पावै।
विघनबिनाशन मगलकारी। गुणविला। बन्दौ भवतारी॥ ९

घत्ता—जो तीरथ जावै पाप मिटावै, ध्यावै गावै भगति करै।
ताको जस कहिए सपति लहिये, गिरिके गुणको बुध उचरै।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घं

श्री ऋषिमण्डल पूजा भाषा

स्थापना ॥ दोहा ॥

चौवीस जिन पद प्रथम नमि, दुतिय सुतिय सुगणधर पाय।
त्रितिय पच परमेष्ठि का, चौथे शारद माय॥
मन वच तन ते चरन युग, करहुँ सदा परनाम।
ऋषि मण्डल पूजा रचों, बुद्धि बल द्यौ अभिराम।

अडिल्ल छन्द

चौबीस जिन वसु वर्ग पंच गुरु जे कहे।
रत्नत्रय चव देव चार अवधी लहे॥
अष्ट ऋद्धि चव दोय सूर ही तीन जू।
अरहत दश दिग्पाल यत्र मे लीन जू।

दोहा—यह सब ऋषि मंडल विषै, देवी देव अपार ।
तिष्ठ तिष्ठ रक्षा करो, पूजूं बसु विधि सार ॥

ॐ ह्रीं वृषभादि चौबीस तीर्थङ्कर अष्ट वर्ग अर्हन्तादि पचपद दर्शन ज्ञान चरित्र सहित चतुर्निकाय देव चार प्रकार अवधिधारक श्रमन अष्ट ऋद्धि संयुक्त बीस चार सूरि तीन ह्रीं अर्हन्त बिम्ब दश दिग्पाल यंत्र सम्बन्धी परम देवाय । अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन ॥ अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट सन्निधिकरणम् ॥

अथाष्टक

हरिगीता छन्द

जल क्षीर उदधि समान निर्मल तथा मुनि चित सारसौं ।
भर भृङ्ग मणिमय नीर सुन्दर तृषा तुरत निवारसो ॥
जहाँ सुभग ऋषि मडल विराजै पूजि मन वच तन सदा ।
तिस मनोवाँछित मिलत सब सुख स्वप्न में दुख नहिं कदा ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव विनाशन समर्थाय यन्त्र सम्बन्धि परम देवाय जलं ॥ १

मलय चंदन मँगाय सुन्दर गंध सो अलि झकरैं ।
सो लेहु भविजन कुम्भ भरिके तप्त दाह सबै हरैं ॥
जहाँ सुभग ऋषि० । तिस मनो० ॥ चंदनं ॥

इन्दु किरण समान सुन्दर जोति मुक्ता की हरैं ॥
हाटक रकैबी धारि भविजन अखय पद प्राप्ती करैं ॥
जहाँ सुभग ऋषि० तिस मनो० ॥ अक्षतं ॥

पाटल गुलाब जुही चमेली मालती बेला घने ॥
जिस सुरभितै कलहस नाचत फल गुम्थि माला बने ॥

जहां सुभग ऋषि० । तिस मनो० ।। पुष्पं ।

अर्द्ध चन्द्र समान फैनी मोदकादिक ले घने ।।
घृत पक्व मिश्रित रस सु पूरे लख क्षुधा डायनि हने ।
जहां सुभग ऋषि० । तिस मनो० ।। नैवेद्य ।।

मणि दीप ज्योति जगाय सुन्दर वा कपूर अनूपक ।
हाटक सुथाली माँहि धरके वारि जिनपद भूपक ।।
जहां सुभग ऋषि० । तिस मनो० ।। दीपं ।।

चन्दन सु कृष्नागरु कपूर मँगाय अग्नि जराइये ।।
सो धूप-धूम्र आकाश लागी मनहुँ कर्म उडाइये ।।
जहाँ सुभग ऋषि० । तिस मनो० ।। धूपं ।।

दाड़िम सु श्रीफल आम्र कमरख और केला लाइये ।
मोक्ष फल के पायवे की आश धरि करि आइए ।।
जहां सुभग ऋषि० । तिस मनो० ।। फल ।।

जल फलादिक द्रव्य लेकर अर्घ सुन्दर कर लिया ।
ससार रोग निवार भगवन् वारि तुम पद मे दिया ।।
जहाँ सुभग ऋषिमडल विराजैं पूजि मन वच तनँ सदा ।
तिस मनोवाछित मिलत सब सुख स्वप्न मे दुख नहिंकदा ।।
ॐ ह्री सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय यन्त्र सम्बन्धि परम देवाय अर्घं ।।९

अर्घावलि

अडिल्ल छन्द

वृषभ जिनेश्वर आदि अन्त महावीर जी ।
ये चउवीस जिनराज हनो भवपीर जी ।।

ऋषि मडल बिच ह्रीं विषै राजै सदा।
पूजूँ अर्घ बनाय हो नहिं दुख कदा॥

ॐ ह्री सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय वृषभादिचतुर्विशति तीर्थङ्कर परम देवाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा॥

आदि कवर्ग सु अन्तजान शाषा सहा।
ये वसुवर्ग महान यत्र में शुभ कहा॥
जल शुभ गंधादिक वर द्रव्य मँगाय के।
पूजहूँ दोऊ कर शीश जिन नाय के॥

ॐ ह्री सर्वोपद्रव विनाशन समर्थाय अष्टवर्ग कबर्गादि देशा वासा हा ह्म्ल्व्यूं रूं परमयंत्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा॥

कामिनी मोहिनी छन्द

परम उत्कृष्ट परमेष्ठी पद पाँच को।
नमत शत इद्र खगवृन्द पद साँच को॥
तिमिर अघनाश करण को तुम अर्क हो।
अर्घ लेय पूज्य पद देत बुद्धि तर्क हो॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव विनाशन सप्तर्थाय पंच परमेष्ठि परम देवाय अर्घ॥

सुन्दरी छन्द

सुभग सम्यग् दर्शन ज्ञान जू।
कह चारित्र सुधारक मान जू॥
अर्घ सुन्दर द्रव्य सु आठ ले।
चरण पूजहुँ साज सु ठाठ ले॥

ॐ ह्री सर्वोपद्रव विनाशन समर्थेभ्य: सम्यग्दर्शन ज्ञान ।रित्रेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा॥

भवनवासी देव व्यन्तर जोतिषी कल्पेन्द्र जू ।
जिनगृह जिनेश्वर देवराजै रत्न के प्रतिबिंब जू ॥
तोरण ध्वजा घण्टा विराजै कर ढवत नवीन जू ।
वर अर्घ ले तिन चरण पूजौं हर्ष अति लीन जू ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव विनाशन समर्थाय भवनेन्द्र व्यन्तरेन्द्र ज्योतिषेन्द्र कल्पेन्द्र चतु प्रकार देवगृहे श्री जिनेचैत्यालय सयुक्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—अवधि चार प्रकार मुनि, धारत जे ऋषिराय ।
अघ लेय तिन चर्ण जजि, विघन सघन मिट जाय ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव विनाशन समर्थेभ्यो चतुःप्रकार अवधिधारक मुनिभ्यो अर्घं ॥

भुजङ्गप्रयात छन्द

कही आठ ऋद्धि धरे जे मुनीश ।
महा कार्यकारी बखाती गनीश ॥
जल गध आदि दे जजो चर्न तेरे ।
लहो सुख सवेरे हरो दु.ख मेरे ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्यो अष्टऋद्धिसहितमुनिभ्यो अर्घं ।

श्री देवी प्रथम बखानी, इन आदिक चौबीसों मानी ।
तत्पर जिन भक्ति विषै हैं, पूजत सब रोग नशै है ॥

ओं ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्यो श्री आदि चतुर्विशतिदेविभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

हन्सा छन्द

यन्त्र विषै वरन्यो तिरकोन, ह्रीं तँह तीन युक्त सुखभोन ।
जल फलादि वसु द्रव्य मिलाय, अर्घ सहित पूजूँ शिरनाय ॥

ओं ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय त्रिकोणमध्ये तीन ह्री संयुक्ताय अर्घं ।

॥ तोमर छन्द ॥

दस आठ दोष निरवारि, छयालीस महागुण धारि ।
वसु द्रव्य अनूप मिलाय तिन चर्न जजो सुखदाय ॥

ओ ह्री सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय अष्टादशदोषरहिताय छयालीसमहागुणयुक्ताय अरहन्त परमेष्ठिने अर्घं ।

॥ सोरठा ॥

दस दिस दस दिग्पाल, दिशानाम सो नामवर ।
तिनगृह श्रीजिन आल, पुजों मैं बन्दौं सदा ॥

ओ ह्री सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्यो दश दिग्पालेभ्यो जिन-भक्तियुक्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—ऋषि मडल शुभयंत्र के, देवी देव चितारि ।
अर्घ सहित पूजहु चरन दुख दारिद्र निवारि ॥

ओ ह्री सर्वोपद्रवविनाशन समर्थेभ्यो ऋषिमडल सम्बन्धिदेवी-देवेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा—चौबीसो जिन चरन नमि, गणधर नाऊँ भाल ।
शारद पद पंकज नमूँ, गाऊँ शुभ जयमाल ॥

जय आदीश्वर जिन आदि देव, शत इन्द्र जजैं मैं करहुँ सेव ।
जय अजित जिनेश्वर जे अजीत, जे जीत भये भव ते अतीत ॥
जय सम्भव जिन भवकूप माहिं, डूबत राखहु तुम शर्ण आंहि ।
जय अभिनन्दन आनन्द देत, ज्यों कमलों पर रवि करत हेत ॥

जय सुमति सुमति दाता जिनन्द्र.जैकुमति तिमिर नाशन दिनद ।
जय पद्मालकृत परमदेव दिन रैन करहू तव चरन सेव ॥

जय श्रीसुपार्श्व भवपाश नाथ, भवि जीवनकूँ दियो मुक्तिवास ।
जय चन्द जिनेश दया निधान, गुणसागर नागर सुख प्रमान ॥

जय पुष्पदन्त जिनवर जगीश, शत इन्द्र नमत नित आत्मशीश ।
जय शीतल बच शीतल जिनेन्द, भवताप नशावत जगत चन्द्र ॥

जय जय श्रेयास जिन अति उदार, भवि कठ माहि मुक्ता सुहार ।
जय वासुपूज्य वासव खगेश, तुम स्तुति करि पुनि नमि हमेश ॥

जय विमल जिनेश्वर विमल देव, मलरहित विराजत करहुँ सेव ।
जन जिन अनत के गुण अनत, कथनी कर गणधर लहे न अंत ॥

जय धर्म धुरन्धर धमवोर, जय धर्म चक्रशुचि ल्याय वीर ।
जय शांति जिनेश्वर शांति भाव, भव वन भटकत शुभ मग लखाव

जय कुन्थु कुन्थुवा जीव पाल, सेवक पर रक्षा करि कृपाल ।
जय अरहनाथ अरि कर्म शैल, तपवज्र खण्ड लहि मुक्ति गैल ॥

जय मल्लि जिनेश्वर कर्म आठ, मल डार पायो मुक्ति ठाठ ।
जय सुव्रत मुनिसुव्रत धरन्त, जय सुव्रन व्रत पालत महन्त ॥

जय नमि नमत सुर वृन्द पाय, पद पङ्कज निरखत शीश नाय ।
जय नेमि जिनेन्द्र दया निधान, फैलायो जग मे तत्व ज्ञान ॥

जय पारस जिन आलस निवारि, उपसर्ग रुद्र कृत जीत धारि ।
जय महावीर महाधीरधार, भवकूप थकी जग तैं निकारि ॥

जय वर्ग आठ सुन्दर अपार, तिन भेद लखत बुध करत सार ।
जय परमपूज्य परमेष्टि सार. जिन सुमरत वरसे आनन्द धार ।

जय दर्शन ज्ञान चरित्र तीन, ये रत्न महा उज्जवल प्रवीन ।
जय चार प्रकार सुदेव सार, तिनके गृह जिन मन्दिर अपार ॥

जो पूजैं वसविधि द्रव्य ल्याय, मैं इत जजि तुम पद शीश नाय।
जो मुनिवर धारत अवधि चारि, तिन पूजें भवि भवसिन्धु पार।
जो आठ ऋद्धि मुनिवर धरन्त, ते मोपै करुणा करि महन्त।
चौबीस देवि जिन भक्ति लीन, वन्दन ताको सु परोक्ष कीन॥
जे ह्रीं तीन त्रिकोण मांहि, तिन नमत सदा आनन्द पाहि।
जय जय जय श्री अरहन्त बिम्ब, तिन पद पूजूं मैं खोई डिम्ब॥
जो दस दिग्पाल कहे कहान, जे दिशा नाम सो नाम जान।
जे तिनके गृह जिनराज धाम, जे रत्नमई प्रतिमाभिराम॥
ध्वज तोरन घण्टा युक्तसार, मोतिन माला लटकैं अपार।
जे ता मधि वेदी है अनूप, तहँ राजत हैं जिनराज भूप॥
जय मुद्रा शान्ति विराजमान, जा लखि वैराग्य बढ़े महान।
जे देवी देव सु आय आय, पूजें तिन पद मन बचन काय॥
जल मिष्ट सु उज्ज्वल पय समान, चन्दन मलयागिरि को महान।
जे अक्षत अनियारे सु लाय, जे पुष्पन की माला बनाय॥
चरु मधुर विविध ताजी अपार, दीपक मणिमय उद्योतकार।
जे धूप सु कृष्णागर सुखेय, फल विविध भांति के मिष्ट लेय॥
वर अर्घ अनूपम करत देव जिनराज चरण आगे चढ़ेव।
फिर मुखतैं स्तुति करते उचार, हो करुणानिधि संसार तार॥
मैं दुःख सहे संसार ईश, तुमतैं छानी नाही जगीश।
जे इहि विधि मौखिक स्तुति उचार, तिन नशत शीघ्र संसार भार॥
इह विधि जो जन पूजन कराय, ऋषि मंडल यंत्र सु चित्त लाय।
जे ऋषि मण्डल पूजा करन्त, ते रोग शोक संकट हरन्त॥
जे राजा रन कुल वृद्धि जान, जल दुर्ग सुगज केहरि बखान।
जे विपत चोर अरु वहि मसान, भय दूर करे यह सकल जान॥

जे राजभ्रष्ट ते राज पाय, पद भ्रष्ट थकी पद शुद्ध पाय।
धन अर्थी जन पावै महान, यामे संशय कछु नाहि जान॥
भार्या अर्थी भार्या लहन्त, सुत अर्थी सुत पावे तुरन्त।
जे रूपा सोना ताम्रपत्र, लिख तापर यन्त्र महा पवित्र॥
ता पूजे भागे सकल रोग, जे वात पित्त ज्वर नाशि शोग।
तिन गृह तो भूत पिशाच जान, ते भाग जांहि संशय न आन॥
जे ऋषि मडल पूजा करन्त, ते सुख पावत लहि लहै न अन्त।
जब ऐसी मैं मन माहि जान, तब भाव सहित पूजा सुठान॥
वसुविधि से सुन्दर द्रव्य ल्याय, जिनराज चरण आगे चढ़ाय।
फिर करत आरती शुद्ध भाव, जिनराज सभी लख हर्ष आव॥
तुम देवन के हो देव देव, इक अरज चित्त मे धारि लेव।
जे दीन दयाल दया कराय, जो मैं दुखिया इह जग भ्रमाय॥
जे इस भव मे वाम्लीन, जे काल अनादि गमाय दीन।
मैं भ्रमत चतुर्गति विपिन माहि, दुख सहे सुख को लेश नाहि॥
ये कर्म महारिपु जोर कीन, जे मनमाने ते दुख दीन।
ये काहे को नहि डर धराय, इनतैं भयभीत भयो अघाय॥
यह एक जन्म की बात जान, मैं कह न सकत हूँ देवमान।
जब तुम अनन्त परजाय जान, दरशायो संसृति पथ विधान।
उपकारी तुम बिन और नाहि, दीखत नाही इस जगत मांहि।
तुम सब लायक ज्ञायक जिनेन्द्र, रत्नत्रय सम्पति द्यो अमन्द॥
यह अरज करूँ मैं श्री जिनेश, भव भव सेवा तुम पद हमेश।
भव भव में श्रावक कुल महान, भव भव मे प्रकटित तत्वज्ञान॥
भव भव मे वृत हो अनागार, तिस पालन तैं हो भवाब्धि पार।
ये योग सदा मुझको लहान, हे दीनबन्धु करुणा निधान॥
दौलत "आसेरी" मित्र दोय, तुम शरण गही हर्षित सुहोय॥

छन्द घत्ता

जो पूजे ध्यावे भक्ति बढ़ावे,
ऋषि मण्डल शुभ यन्त्र तनी।
या भव सुख पावे, सुजस लहावे,
पर भव स्वर्ग सुलक्ष धनी॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव विनाशन समार्थाय रोगशोक सर्व संकट हराय सर्वशान्ति पुष्टि कराय, श्री वृषभादि चौबीस तीर्थङ्कर अष्ट वर्ग अरहंतादि पचपद दर्शन ज्ञान चारित्र सहित चतुर्णिकाय देव चव प्रकार अवधिधारक श्रमन अष्ट ऋद्धि संयुक्त बीस चार गुप्तिन ह्रीं अर्हं बिम्ब दशदिग्पाल यन्त्र सम्बन्धि परमदेवाय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आशीर्वाद

ऋषि मण्डल शुभ यन्त्र को, जो पूजे मन लाय।
ऋद्धि सिद्धि ता घर बसे, विघन सघन मिट जाय॥

विघन सघन मिट जाय, सदा सुख वो नर पावे।
ऋषि मडल शुभ यन्त्र तनी, जो पूज रचावै॥
भाव भक्ति युत होय, सदा जो प्राणी ध्यावै।
या भव में सुख भोग, स्वर्ग की सम्पत्ति पावै॥
या पूजा परभाव मिटे, भव भ्रमण निरन्तर।
यातें निश्चय मान करो, नित भाव भक्तिवर॥

इत्याशीर्वादः। पुष्पांजलि क्षिपेत्।
॥ इति श्री ऋषि मडल पूजा सम्पूर्णम्॥

सम्वत् मूव ग्रह मांहि, सावन सार असेत।
पहर रात बाकी रहो, पूर्ण करी सुख हेत॥

ऋषि-मण्डल-स्तोत्र

आद्यन्ताक्षरसलक्ष्यमक्षर व्याप्य यत्स्थितम् ।
अग्निज्वालासमं नाद विन्दुरेखासमन्वित ॥१

अग्निज्वालासमाक्रान्तं मनोमलविशोधनं ।
देदीप्यमानं हृत्पद्मे तत्पदं नौमि निर्मल ॥ २ ॥ युग्मं

ॐ नमोऽर्हद्भ्य ईशेभ्य ॐ सिद्धेभ्यो नमो नम. ।
ॐ नम. सर्वसूरिभ्य. उपाध्यायेभ्य ॐ नमः ॥३

ॐ नमः सर्वसाधुभ्यः तत्वदृष्टिभ्यो ॐ नम· ।
ॐ नम. शुद्धबोधेभ्यश्चारित्रेभ्या नमो नम. ॥४

श्रेयसेऽस्तु श्रियस्त्वेतदर्हदाद्यष्टकं शुभ ।
स्थानेष्वष्टसु संन्यस्त पृथग्बीजसमन्वितम् ॥५

आद्य पदं शिरो रक्षेत् पर रक्षतु मस्तक ।
तृतीय रक्षेन्नेत्रे द्वे तुर्य रक्षेच्च नासिका ॥६

पञ्चमं तु मुखं रक्षेत् षष्ठ रक्षतु घटिका ।
सप्तम रक्षेन्नाभ्यन्त पादातं चाष्टम पुनः ॥७॥ युग्मं

पूर्वं प्रणवतः सान्तः सरेफो द्वित्रिपञ्जषान् ।
सप्ताष्टदशसूर्याङ्कान् श्रितो विंदुस्वरान् पृथक् ॥८

पूज्यनामाक्षराद्यास्तु पञ्चदर्शनबोधक ।
चारित्रेभ्यो नमो मध्ये ह्री सान्तसमलकृतं ॥९

जम्बूवृक्षधरो द्वीपः क्षारोदधि—समावृतः ।
अर्हऽदाद्यष्टकरष्टकाष्ठाधिष्ठैरलंकृत: ॥ १०

तन्मध्ये सङ्गतो मेरुः कूटलक्षैरलंकृतः ।
उच्चैरुच्चैस्तरस्तारतारामण्डलमण्डितः ॥११

तस्योपरि सकारांतं वीजमध्यास्य सर्वगं।
नमामि बिम्बमार्हंत्यं ललाटस्थं निरंजन ॥३॥ विशेषकं

अक्षयं निर्मल शान्त बहुलं जाड्यतोज्झितं।
निरीह निरहङ्कार सार सारतर घन ॥४

अनुद्भूत शुभं स्फीत सात्त्विकं राजसं मतं।
तामस विरसं बुद्ध तैजस सर्वरीसमम् ॥५

साकारं च निराकारं सरसं विरसं पर।
परापर परातीतं पर परपरापरं ॥६

सकल निष्कलं तुष्ट निर्भृतं भ्रान्तिवर्जितं।
निरञ्जन निराकाक्षं निर्लेपं वीतसंशय ॥७

ब्रह्माणमीश्वर बुद्धं शुद्धं सिद्धमभंगुर।
ज्योतीरूपं महादेव लोकालोकप्रकाशक ॥८॥ कुलकं

अर्हदाख्यः सवर्णान्तः सरेफो विंदुमंडितः।
तुर्यस्वरसमायुक्तो बहुध्यानादिमालितः ॥९॥

एकवर्णं द्विवर्णं च त्रिवर्णं तुर्यवर्णक।
पञ्चवर्णं महावर्णं सपरं च परापर ॥१०॥ युग्मं

अस्मिन् वीजे स्थिताः सर्वे ऋषभाद्या जिनोत्तमाः।
वर्णैर्निजैर्निजैर्युक्ता ध्यातव्यास्तत्र सङ्गताः ॥११॥

नादश्चन्द्रसमाकारो बिन्दुर्नीलसमप्रभः।
कलारुणसमाक्रान्तः स्वर्णाभः सर्वतोमुखः ॥१२

शिरः संलीन ईकारो विनीलो वर्णतः स्मृतः।
वर्णानुसारिसंलीनं तीर्थकृन्मण्डलं नमः ॥१३ युग्मं

चन्द्रप्रभपुष्पदन्तौ नादस्थितसमाश्रितौ।
बिंदुमध्यगतौ नेमिसुव्रतौ जिनसत्तमौ ॥१४

पद्मप्रभवासुपूज्यौ कलापद्मनिःस्थितौ ।
शिरईस्थितसलीनौ पार्श्वपार्श्वौ जिनोत्तमौ ॥१५
शेषास्तीर्थंकरा. सर्वे रह स्थाने नियोजिताः ।
मायाबीजाक्षर प्राप्ताश्चतुर्विंशतिरर्हताम् ॥१६
गतरागद्वेषमोहाः सर्वपापविवर्जिता ।
सर्वदा सर्वलोकेषु ते भवन्तु जिनोत्तमा ॥१७ कुलकं॥
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वाङ्गं मा मा हिंसन्तु पन्नगा ॥१८
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वाङ्गं मा मा हिंसन्तु नागिनी ॥१९
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वाङ्गं मा हिंसन्तु गोनसाः ॥२०
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु वृश्चिकाः ॥२१
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु काकिनी ॥२२
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु डाकिनी ॥२३
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु शाकिनी ॥२४
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु राकिनी ॥२५
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु लाकिनी ॥२६
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु शाकिनी ॥२७
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु हाकिनी ॥२८
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु राक्षसाः ॥२९
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु व्यन्तराः ॥३०
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु भेकसा ॥३१
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु ते ग्रहा ॥३२
देवदेवस्य० मा हिंसन्तु तस्कराः ॥३३

शतमष्टोत्तरं प्रातर्ये पठन्ति दिने दिने।
तेषां न व्याधयो देहे प्रभवन्ति च संशयः ॥६८

अष्टमासावधि यावत् प्रातः प्रातस्तु यः पठेत् ।
स्तोत्रमेतन्महातेजस्त्वर्हद्बिंबं स पश्यति ॥६९

दृष्टे सत्यार्हते बिंबे भवे सप्तमके ध्रुवं।
पदं प्राप्नोति विश्वस्त परमानन्दसम्पदां ॥७० युग्मं

इदं स्तोत्रं महास्तोत्रं स्तुतीनामुत्तमं परं।
पठनात्स्मरणाज्जाप्यात् च सर्वदोषैर्विमुच्यते ॥७१

॥ इति ऋषि मण्डल स्तोत्रं सम्पूर्णाम् ॥

जाप मन्त्र १०८ बार

ॐ ह्रां ह्रिं ह्रुं ह्रें ह्रैं ह्रौं ह्रः असि आ उसा सम्यक् दर्शन ज्ञान चारित्रेभ्यो ह्रीं नमः।

निर्वाण क्षेत्र पूजा

वंदो भगवान को, भाव भगति सिरनाय।
पूजों श्री भगवान कों, सिद्ध क्षेत्र सुखदाय ॥१

द्वीप अढाई के विषै, सिद्ध क्षेत्र सो जान।
तिनको मैं वंदन करो, मन वच तन धरि ध्यान ॥२

पुनि इस आर्य क्षेत्र मे, जो जिन मुक्ति लहाय।
तिनकी मैं पूजा करों, भव भव होय सहाय ॥३

स्थापना:—

ॐ ह्रीं श्री भरत क्षेत्रे आर्य खंड सम्बन्धी सिद्ध क्षेत्राणि।

अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानं। अत्र तिष्ट ठः ठः स्थापनं। अत्रमम् संनिहितो भव भव् वषट् सन्निधि करण स्थापनं॥

कर्मादि जल:—

शीतल उज्वल निर्मल नीर, पूजों सिद्ध क्षेत्र गंभीर।
लहो निर्वाण, मन वच तन धरि ध्यान, लहो निर्माण॥
अब मैं शरण गही तुम आन, भवदधि पार उतारन जान।
लहो निर्वाण, मन वच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण॥१

ॐ ह्रीं श्री भरत क्षेत्रे आर्य खंड सम्बन्धी सिद्ध क्षेत्रेभ्यो जलं॥ १

चन्दन:—

चन्दनघिसो कपूर मिलाय, पूजो सिद्ध क्षेत्र सुखदाय।
लहो निर्वाण, मन वच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण॥
अब मैं शरण गही तुम आन, भव दधि पार उतारण जान।
लहो निर्वाण, मन वच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण॥२

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध क्षेत्रेभ्यो चन्दनं॥२॥

अक्षत—

अमल अखंडित अक्षत धोय, पूजो सिद्धक्षेत्र सुख दाय
लहो निर्वाण मन वच तन धरि ध्यान, लहो निर्माण॥
अब मैं शरण गही तुम आन भव दधि पार उतारन जान।
लहो निर्वाण, मन वच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण॥२

ओं ह्रीं श्री सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अक्षतं॥३॥

पुष्प:—

पुष्प सुगंध मधुप गुंजार, पूजो सिद्ध क्षेत्र मनधार

लहो निर्वाण, मन बच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण ॥
अब मैं शरण गही तुम आन, भव दधि पार उतारन जान।
लहो निर्माण, मन बच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण ॥२

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध क्षेत्रेभ्यो पुष्पं ॥४॥

नैवेद्य:—

वर नैवेद्य मिष्ठ अधिकाय, पूजों सिद्ध क्षेत्र समभाय।
लहो निर्वाण, मन बच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण ॥
अब मै शरण गही तुम आन, भवि दधि पार उतारन जान।
लहो निर्वाण, मन बच तन धरि ध्यान, लहो निर्माण ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध क्षेत्रेभ्यो नेभेद्यं ॥५॥

दीप:—

दीप रतन मय तेज प्रकाश, पूजों सिद्ध क्षेत्र करि आश।
लहो निर्वाण, मन बच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण ॥
अब मैं शरण गही तुम आन, भव दधि पार उतारन जान।
लहो निर्वाण, मन बच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध क्षेत्रेभ्यो दीपं ॥६॥

धूप:—

धूप सुगंध लहे दस अंग, पूजों सिद्ध क्षेत्र सरवज्ञ।
लहो निर्वाण, मन बच तन धरि ध्यान, लहो सिर्वाण ॥
अब मै शरण गही तुम आन, भव दधि पार उतारन जान।
लहो निर्वाण, मन बच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध क्षेत्रेभ्यो धूप ॥७॥

फल:—

फल प्रासुक अति उत्तम सार, पूजों सिद्ध क्षेत्र वांछित दातार।
लहो निर्वाण, मन वच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण॥

अब मैं शरण गही तुम आन, भव दधि पार उतारन जान।
लहो निर्वाण, मन वच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध क्षेत्रेभ्यो फलं॥८॥

अर्घ.—

अर्घ कियो निज माफिक शक्ति, पूजो सिद्धक्षेत्र करिभक्ति।
लहो निर्वाण, मन वच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण॥

अब मैं शरण गही तुम आन, भव दधि पार उतारन जान।
लहो निर्वाण, मन वच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अर्घं "६,,

अर्घ.—

तीरथ सिद्ध क्षेत्र के सवैं वांछा मेरी पूजवो अवैं।
लहो निर्वाण मन वच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण॥

अब मैं शरण गही तुम आन, भव दधि पार उतारन जान।
लहो निर्वाण, मन वच तन धरि ध्यान, लहो निर्वाण॥

ॐ ह्रीं श्री क्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घं "१०"

अथ प्रत्येक पूजा:—

श्री आदीश्वर देव भये निर्वाण जी।
श्री कैलाश शिषिर ऊपर मान जी ॥
तिनके चरण जजो मै, मन बच काय के।
भवदधि उतरो पार, शरण तुम आय के ॥

ॐ ह्रीं श्री कैलास शिषिर तें श्री आदिनाथ
स्वामी मोक्ष पद धारनेभ्यो अर्घ ॥१॥

चंपापुर तें मुक्ति भये, जिनराज जी।
बास पूज्य महाराज, कर्म क्षय कार जी ॥तिनके॥

ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर तें श्री बास पूज्य स्वामी मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥२॥

श्री गिरिनार शिषिर, जग मे विख्यात जी।
सिद्ध वधू के नाथ, भये नेमनाथ जी ॥तिनके॥

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिषिर तें श्री नेमनाथ स्वामी मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥३॥

पावापुर सरवर के बीच, महावीर जी।
सिद्ध भये हन कर्म, करे सुर सेवजी ॥तिनके॥

ॐ ह्री श्री पावापुर ते श्री महावीर स्वामी मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥४॥

श्री सम्मेद शिखिर शिवपुर को द्वार है।
वीस जिननेश्वर मुक्ति भये भव तार हैं ॥तिनके॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिषिर सें श्री बीस तीर्थंकर मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥५॥

नगानग कुमार दोय महाराज जी।
मुक्ति गये सोनागिरि जग हितकार जी॥
साढे पांच करोड़ भये शिवराय जी।
पूजो मनवच काय लहो सुख दाय जी॥
तिनके चरण जजो मैं मनवच काय के।
भवदधि उतरो पार शरण तुम आय के॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिर ते श्री नंगानंग कुमारादि साढे पांच कोड़ मुनि मोक्षपद धारकेभ्यो अर्घं ॥६॥

राम हनू सुग्रीव नीलअरु महानील जी।
गव गवादि इत्यादि गये शिव तीर जी॥
कोड़ निन्यानवे मुक्तिगये तुंगीगिर पाय के।
पूजो मन वच काय लहो सुख दाय के॥तिनके॥

ॐ ह्रीं श्री तुंगीगिर ते श्री राम हनूमान सुग्रीव नील महानील गव गवाक्ष इत्यादि निन्यानवे कोड़ मोक्षपद धारकेभ्यो अर्घं॥७॥

वरदत्तादि वरंग मुनिंद्र सुनाय जी।
सायरदत्त महान महागुण धाम जी॥
ताड़व रत्नात्रय गिरते मुक्ति भये सुखदाय हैं।
तीन कोड अरु लाख पचास सुगाय हैं॥
तिनके चरण जजो मैं मन वच काय के।
भवदधि उतरो पार शरण तुम आय के॥

ॐ ह्रीं श्री तारवरनपुर ते श्रीं वरदत्त वरंग सायरदत्तादि साढे तीन कोड मुनि मोक्षपद धारकेभ्यो अर्घं॥८॥

श्री गिरिनारि शिषर जग मे विख्याति है।
कोड बहत्तर अधिक अरु सौ सात है॥
सम्बु प्रद्युम्न अनिरुद्ध मुक्ति को पाइके।
शिवपुर पहुँचे महा सुख पाइ के॥तिनके॥

ॐ ह्री श्री गिरिनारि शिषर तें श्री सम्बु प्रद्युम्न अनरुद्धादि बहत्तर कोड़ सात सौ मुनि मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥९॥

रामचन्द्रे के सुत दोय जिन दीक्षा धरी।
लाड़नरिन्द्र आदि मुनि आठों कर्मन हरी॥
पावागिर के शिषिर ध्यान धरि के सही।
पाच कोड़ मुनि सहित परम पदवी लही॥
तिनके चरण जजो मै मन बच काय के।
भवदधि उतरो पार शरण तुम आय के॥

ॐ ह्री श्री पावागिरि शिषर ते श्री रामचन्द्र के दो पुत्र लाड नरिन्द्र आदि पांच कोड मुनि मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥१०॥

पाडव तीन द्रविड राजा तुम जानियो।
आठ कोड मुनि चरम शरारो मानियो॥
स्वेतजयगिरि ते मुक्ति-वर पाय के।
शिवपुर लीन्हो तिन सिहासन जाय के॥
तिनके चरण जजो मैं मन बच काय के।
भवदधि उतरो पार शरण तुम आय के॥

ॐ ह्री श्री सेतुंजय गिरनार शिषर ते तीन पाडव द्रविड राजा आदि आठ कोड़ मुनि मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥११॥

श्री गजपथ शिखिर पर्वत सुखधाम है।
मोक्ष गये बलभद्र सात अभिराम हैं॥

आठ कोड़ि मुनि सहित नमो मन लाय के।
सिंहासन तिन लीन्हों शिवपुर जाय के ।।तिनके।।

ॐ ह्रीं श्री गजपथ शिषर ते सात बलभद्र आठ कोड मुनि मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घ ।।१२।।

रावन के सुत आदि पाच कोड सो मानिये।
ऊपर लाख पचास परम सुख मानिये ।।
रेवा नदी के तीर मुक्ति सो जाय के।
शिवपुर लीन्हो राज महा सुख पाय के ।।तिनके।।

ॐ ह्रीं श्री रेवा नदी तीर रावण के सुत आदि साढ़े पांच कोड़ि मुनि मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घ ।।१३।।

द्वै चक्री दस काम कुमार महावली।
रेवा नदी के पच्छिम कूट सिद्ध हेगी भली ।।
साढ़े तीन कोड़ि मुनि शिव को पाय के।
लीन अटल पद शिवपुर जाय के ।।तिनके।।

ॐ ह्रीं श्री रेवा नदी के पच्छिम भाग सिद्धवर कूट ते दो चक्री दस काम कुकार आदि साढे तीन कोड मुनि मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ।।१४।।

दक्षिण दिश में चूल्हागिर उतग शिखर जहाँ।
बड़नगरी बड़नगर शोभित है तहाँ।।
इन्द्रजीत अरु कुम्भकरण व्रत धारि के।
मुक्ति गये वसु कर्मजीत सुख कार के ।।
तिनके चरण जजो मे मनबच काय के।
भवदधि उतरो पार शरणं तुम आय के ।।

ॐ ह्रौं श्री चूलगिरि उतंग शिषिर तें श्री इन्द्रजीत कुम्भ करण मोक्ष पद धारनेभ्यो अर्घं ॥१५॥

चेलना नदी के तीर पावागिर तहां शिखर जी।
समद भद्र मुनि चार बडी है रिद्धि जी॥
तहां ते परमधाम के सुख पाय के।
मुक्ति गये वसु कर्म जीत सुख कारिके ॥तिनके॥

ॐ ह्रौं पावागिरि शिषर ते समदभद्र आदि चार मुनि मोक्ष पद धारनेभ्यो अर्घं ॥१६॥

फलहोडी वडगांव अनूप जहां वसे।
पश्चिम दिश मे द्रोण महा पर्वत लसे॥
गुरुदत्तादि मुनीश्वर शिव को पाय के।
मुक्ति गये वसु कर्म जीत सुख कार के ॥तिनके॥

ॐ ह्रौं श्री द्रोणगिरि सिषिर ते श्री गुरुदत्तादि मुनि मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥१७॥

बाल अरु महावाल मुनीश्वर दोग हैं।
नागकुमार मिलाय तीन ऋषि होय हैं॥
श्री अष्टापद शिखर तें शिवपुर जाय के।
मुक्ति गये वसु कर्म जीत सुख कार के ॥तिनके॥

ॐ ह्रौं अष्टापद शिषर ते श्री बाल माहवाल व नागकुमार तीन मुनि मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥१८॥

अचलापुर की दिश ईसान महा बसे।
तहां मेढ़ागिर शिखर महा पर्वत लसे॥
तीन कोड अरु लाख पचास महामुनि।

मुक्तिगये धरि ध्यान करम अरितिन हनी ॥
तिनके चरण जजो मैं मनवच काय के।
भवदधि उतरों पार शरण तुम आय के ॥

ॐ ह्री श्री अचलापुर के ईसान दिश मेढ़ागिरि पर्वत के शिषर ते साढे तीन कोडि मुनि मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥१६॥

वंस स्थल बन पच्छिम कुंथ पहाड़ है।
कुल भूषण अरु देश भूषण मुनि सुखकार है ॥
तहा ते शुक्ल ध्यान कर जो शिवपुर जाय के।
मुक्ति गये वसु कर्म जात सुख कार के ॥तिनके॥

ॐ ह्री श्री कुन्थगिर शिषर ते श्री कुल भूषन देश भूषण मुनि मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥२०॥

जसधर राजा के सुत पाच शतक कहे।
देश कलिग मझार महा मुनि ते भये ॥
शुल्क ध्यान ते मुक्ति रमनि सुख पायके।
मुक्ति गये वसु कर्म जीत सुख कार के ॥तिनके॥

ॐ ह्री श्रीं कलिग देश मे श्री जसधर राजा के पांच सौ पुत्र मुनि होय मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥२१॥

कोडि शिला इक दक्षिण दिश मे है सही।
निहचे सिद्ध क्षेत्र है, श्री जिनवर कही ॥
कोड़ि मुनीश्वर मुक्ति गये सुख पायके।
मुक्ति गये वसु कर्म जीति सुख कार के ॥तिनके॥

ॐ ह्रीं श्री कोटिशिलाते कोडि मुनि मोक्षपद धारनेभ्यो अर्घं ॥२२॥

समवशरण श्री पार्श्व जिनेश्वर देव को ।
करें सुरासुर सेव परमपद लेव को ॥
रेसंदीगिरि उत्तम थान सुपाथ के।
वरदत्तादि पांच मुनि मुक्ति सुजाय के ॥
तिनके चरण जजों में मनवच काय के।
भवदधि उतरों पार शरण तुम आयके ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ स्वामी के समवशरण स्थान रेसंदीगिरि (अथवा नयना गिर) शिखर से श्री वरदत्तादि पांच मुनि मोक्ष पद धारनेभ्यो अर्घ ॥२३॥

पोदनपुर को राज त्याग मुनि जे भये।
जीते अरि वसु कर्म सर्व को सुख दये ॥
बाहू वलि हनि कर्म प्रथम शिवपुर गये।
लीन अटल पद जाय मुक्ति के सुख लहे ॥
तिनके चरण जजों में मनवच काय के।
भवदधि उतरों पार शरण तुम आय के ॥

ॐ ह्रीं श्री पोदनपुर से श्री बाहूवलि स्वामी मोक्षपद धरनेभ्यो अर्घ ॥२४॥

श्री तीर्थंकर चतुर्वीस भगवान हैं।
गर्भ जन्मतप ज्ञान भये निर्वान हैं ॥
जीते अरि वसु कर्म सर्व जीव के दुख हरे।
लीन अक्षय पद आप मुक्ति के सुख लहे ॥
तिनके चरण जजों में मनवच काय के।
भवदधि उतरों पार शरण तुम आय के ॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशत तीर्थंकर पंच कल्याण धारनेभ्यो अर्घं ॥२५॥

तीन लोक में तीरथ सुखदाय हैं।
नित प्रति वंदो भाव सहित सिरनाय हैं॥
तिनकी भक्ति करो मैं मन बच काय के।
भवदधि उतरो पार, शरण तुम आय के॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोक विषें सब तीर्थ क्षत्रेभ्यो अर्घं ॥२६

॥ अथ जयमाला पद्धड़ी छन्द ॥

श्री आदीश्वर बन्दो महान कैलाश शिषिर ते मोक्ष जान।
चम्पापुर से श्री वासु पूज्य। तिनमुक्तिलही अति हर्षहूज्य॥१
उर्ज्जेन ते नेमजी मुक्ति पाय। पावापुर ते श्री वीर राय॥
सम्मेद शिषर श्रीमुक्ति द्वार। श्री बीस जिनेश्वर मुक्तिधार॥२
सोनागिरि साढ़े पाच कोडि। तुगी गिर राम हनू सुजोड़॥
निन्यानवे कोड़िमुनि मुक्ति मझार। तिनके हम चरणन नमे त्रिकाल।
वरदत्तादिक वरंग मुनिंद्र चन्द्र। तहा सायरदत्त महान बिन्द॥
ताण्डव रला त्रै पर ते मोक्ष पाय। तिनके हम चरनन शीस नाय॥४
संबु प्रद्युम्न अरु अनिरुद्ध भाय। गिरनार शिखिरते मोक्ष पाय॥
बहत्तर कोड़ि सौं सात जान। तिनको मैं मनवच करों ध्यान॥५
श्री रामचन्द्र के दोय सपूत। अरु पांच कोड़ मुनि सहित हूत॥
लाड़ नरेन्द्र इत्यादि जान। श्री पावागिर ते मोक्ष थान॥६
अष्ट करोड़ मुनिराज जान। पांडव त्रय द्रविड़ राजा महान॥
श्री सेतुंजय ते मुक्ति पाय। तिनको मै वन्दो सिर नवाय॥७

गजपन्थ शिषर जगमे विशाल । मुनि छियानवे कोड़ि हूजे दयाल।
वलभद्र सात मुक्ति सुजाइ । तिनको हम मनबच शीस नाय ॥८
रावण के सुत अरु पाँच कोड़ि। पचास लाख ऊपर सुजोड़ ॥
रेवा तट ते तिन मुक्ति लीन । करि शुक्ल ध्यान ते कर्म छीन ॥९
द्वै चक्रवर्ती दश कामदेव। आरूढ कोड़ि मुनिश्वर ऐव ॥
रेवा के पच्छिम कूट जान। तिनवरी मुक्तिबसु कर्म हान ॥१०
दक्षिण दिशमे गिर चूल जान। तहा इन्द्रजीत कु भकरण मान
ते मुक्ति गये बसु कर्म जीत । सो सिद्ध क्षेत्र बदो विनीति ॥११
पावागिरि शिखिर मझार जान । तहा समुद्र भद्र मुनि चार मान॥
तिन मुक्तिपुरी गमन कीन। शिवमारग हमको सोधि दीन ॥१२
फलहोडी बड़गाव अनूप। पश्चिम दिश द्रोनागिर सरूप ॥
गुरुदत्तादिक शिवपद लहाय। तिनको हम बदों शीस नाय ॥१३
श्री वाल अरु महाबाल मुनीश दोय। श्रीनागकुमार मिल तीन होय ॥
श्री अष्टापद ते मुनि मुक्ति होय, तिन आठ करम मलको सुधोय ॥१४
अचलापुर के दिश मे ईसान। चहां मेढगिरी नामा पर्वत प्रमान ॥
मुनि तीन कोड़ि ऊपर सुजोइ। पचास लाख मिल मुक्ति होय ॥१५
गस स्थल बन कुन्थू प्रहार । कुलभूषणदिशभूषण सुसार ॥
भारी उपसर्ग सहो विनीत। तिन मुक्ति लई अरि कर्म जीत ॥१६
जसधर के सुतशत पंचसार। कालिग देश ते तिन मुक्ति धार ॥
मुनि कोटि शिलाते मुक्ति लीन। तिनको हम मनबच नमनकीन ॥१७
बरदत्तदिक पाचो मुनीश । तिन मुक्ति लई बंदों सुईश।
श्री वाहूबलि बलि अधिक जान। बसु कर्म नाश के मोक्ष थान ॥१८
जहाँ पच कल्याण जिनेन्द्र देव। तिनकी हम नित मागे सुजेब ॥
यह अर्ज गरीबन की दयाल। निर्वान देहु हमको सुहाल ॥१९

छत्ता अडिल्लः —

यह गुण माल महान सुश्रविक जन गाइयो।
स्वर्ग मुक्ति दातार कंठ मे लाइयो॥
यासौं सब सुख होई सुजस को पाइ के।
भवदधि उतरो पार शरण तुम आय के ॥२०

ॐ ह्रीं श्री भरत क्षेत्रे अर्य खड सम्बन्धी सिद्ध क्षेत्रेभ्यो महार्घ ॥

दोहा

नर भव उत्तम पाय के औसर मिलियो मोय।
चोखो ध्यान लगाय के शरण गही प्रभु तोय ॥१

बालक सम बुद्धि है, भक्ति थकी गुण गाय।
भूल चूक तुम सोधियो, सुनियो सज्जन भाय ॥२

औगुण मम मत देखियो, गुण गह लीजो मीत।
पूजा नितप्रति कीजियो, कर जिनवर सो प्रीत ॥३

सवत अष्टादस शतक, सत्तार एक महान।
भादो कृष्ण जुसप्तमी, पूरन भयो सुजान ॥४

॥ इति श्री निर्वाण काड पूजा समपर्णाम् ॥

वृहद् अर्घावली

देव शास्त्र गुरु का अर्घ

जल परम उज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूँ।
वर धूप निर्मल फल विविध, बहु जन्म के पातक हरूँ॥

इह भांति अर्घ चढाय नित भवि, करत शिव पकत मचूँ ।
अरहत श्रुत सिद्धान्त गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥

दोहा—वसुविधि अर्घ सयोगके, अति उछाह मन कीन ।
जासो पूजो परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥

ओ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ ।

वीस तीर्थंकर अर्घ

जल फल आठो द्रव्य, अर्घ कर प्रीति धरी है ।
गणधर इन्द्रन हूतै थुति पूरी न करी है ॥
'द्यानत' सेवक जानके, जगतै लेहु निकार ।
सीमंधर जिन आदि दे वीस विदेह मझार ॥
श्री जिनराज हो भवतारण तरण जिहाज ।

ओं ह्रीं श्री वीस विहरमान जिनेन्द्र सीमंधर जी, जुगमन्दर जी, बाहुजी, सुबाहुजी, सुजातजी, स्वयंप्रभुजी, ऋषभानन जी, अनन्तवीर्य जी, सोरिप्रभुजी, विशालकीर्ति जी, वज्रधरजी, चन्द्रानन जी, भद्रबाहुजी, भुजगमजी, ईश्वरजी, नेमीश्वरजी, वीरसेनजी, महाभद्रजी, देवयशोधरजी, अजितवीर्येभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ ॥

अकृतिम चैत्यालय अर्घ

वसु कोटि सुछप्पन लाख ऊपर, सहस सत्याणवे मानिये ।
सत चार पै गिनले इक्यासी, भवन जिनवर जानिये ॥
तिहुँ लोक भीतर सासते सुर असुर नर पूजा करे ।
तिन भवन को हम अर्घ लेकै पूजि है जग दुख हरे ॥

ॐ ह्रीं तीन लोक सम्बन्धी आठ करोड छप्पन लाख सत्तानवे हजार चार सौ इक्यासी अकृत्रिमचैत्यालयेभ्यो अर्घ ॥

तीन लोक सम्बन्धी कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालय उर्घ

सात करोड़ बहत्तर लाख पाताल विषै जिन मन्दिर जानो।
मध्यहिलोक मे चार सौ अट्ठावन व्यंतर ज्योतिष के अधिकानो॥
लाख चौरासी हजार सत्तानवे तेईस ऊरध-लोक बखानो।
इक २ मे प्रतिमा शत आठ नमो कर जोड़ त्रिकाल सयानो॥

ओं ह्री तीन लोक सम्बन्धी कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयेभ्यो अर्घं।

सिद्ध परमेष्ठी का अर्घ

जय फल वसु वृन्दा अरघ अमन्दा जगत अनन्दा के कन्दा।
मेटो भव फन्दा सब दुख द्वन्दा, हीरा चन्दा तुम बन्दा॥
त्रिभुवन के स्वामी त्रिभुवन नामी, अन्तरयामी अभिरामी।
शिवपुर विश्रामी निज निधि यामी सिद्ध जजामी सिरनामी॥

ओ ह्री नमो सिद्धाण सिद्ध चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ।

पंच परमेष्ठी का अर्घ

मन मांहि भक्ति अनादि नमिहो देव अरहन्त को सही।
श्री सिद्ध पूजूं अष्टगुणमय सूरिगुण छत्तीस ही॥
अङ्ग पूर्व धारी जजौ उपाध्याय साधुगुण अठवीस जी।
ये पंचगुरु निरग्रन्थ सुमंगलदायी जगदीश जी॥

ओं ह्रीं श्री अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय सर्व साधु पच परमेष्टिभ्यो अर्घ॥

श्री चौबीस तीर्थङ्कर का अर्घ

जल फल आठो शुचि सार, ताको अर्घ करो। तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष वरो॥ चौबीसो श्री जिन चद

आनन्द कन्द सही पद जजत हरत भव फन्द पावत मोक्ष मही ॥

ओं ह्री श्री वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अर्घं ॥

श्री ऋषभनाथ का अर्घ

जल फलादि समस्त मिलाय कें, जजत हूँ पद मंगल गाय के ।
भगत वत्सल दीनदयाल जी, करहु मोहि सुखी लखि हालजी ॥

ओ ह्री श्री ऋषभ देव जिनेन्द्राय अनर्घ्यं पद प्राप्तये अर्घं ।

श्री अजितनाथ का अर्घं

जल फल सब सज्जे बाजत बज्जे गुन गन रज्जे मम नज्जे ।
तुव पद जुग मज्जे सज्जन जज्जे ते भव भज्जे निज कज्जे ॥

श्री अजित जिनेशं नुतनाकेशं चक्र धरेशं खग्गेशं ।
मन वांछित दाता त्रिभुवन त्राता पूजो ख्याता जग्गेशं ॥

ओ ह्री श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अनर्घं पद प्राप्तये अर्घं ॥

श्री शंभवनाथ का अर्घ

जल चन्दन तन्दुल प्रसून चरू, दीप धूप फल अर्घ किया ।
तुमको अरपो भाव भगति धर, जै जै जै शिव रमनि पिया ॥
सम्भव जिनके चरन चरचते, सब आकुलता मिट जावै ।
निज निधि ज्ञान दरश सुख वीरज, निराबाध भवि जन पावै ॥

ओ ह्रीं श्री सम्भवनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घं ॥

श्री अभिनन्दनाथ का अर्घं

अष्ट द्रव्य सँवारि सुन्दर सुजस गाय रसाल ही । नाचत रचत जजो चरन जुग, नाय सुभाल ही ॥ जय कलुषताप

निकन्द श्री अभिनन्द, अनुपम चन्द है। पद इन्द्र वृन्द जजैं
प्रभु भवदन्द फन्द निकन्द है ॥

ओं ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अनर्घं पद प्राप्तये अर्घं ॥

श्री सुमतिनाथ का अर्घं

जल चन्दन तन्दुल प्रसून चरु, दीप धूप फल सकल मिलाय।
नाचि राचि शिरनाय समरचे, जयजय जयजय जय जिनराय ॥

हरिहर वन्दित पाप निकंदित, सुमति नाथ त्रिभुवन के राय।
तुम पद पद्म सदम शिवदायक, जजत मुदित मन उदितसुभाय ॥

ओं ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घं पद प्राप्तये अर्घं ॥

श्री पदम प्रभु का अर्घं

जय फल आदि मिलाय गाय गुन, भगतभाय उमगाय।
जजो तुमहिं शिवतियवर, जिनवर आवागमन मिटाय ॥

मन बच तन त्रय धार देत ही, जनम जरा मृत जाय।
पूजों भावसों, श्री पदम नाथ पद सार पूजों भावसो ॥

ओं ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय अनर्घंपदप्राप्तये अर्घं ॥

श्री सुपार्श्वनाथ का अर्घं

आठो दरब साजि गुण गाय, नाचत राचत भगति वढाय।
दया निधि हो, जय जगबन्धु दया निधि हो ॥

तुम पद पूजो मन वच काय, देव सुपारस शिबपुर राय।
दयानिधि हो, जय जगबन्धु दया निधि हो ॥

ओं ह्रीं श्री सुपारश्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घंपदप्राप्तये अर्घं ॥

श्री चन्द्रप्रभु का अर्घ

साजि आठो दरब पुनीत, आठो अङ्ग नमो।
पूजो अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनिगमो॥
श्री चन्द्रनाथ द्युतिचन्द्र, चरनन चन्द लगें।
मन वच तन जजत अमन्द, आतम जोति जगे॥

ओ ह्रौ श्री चन्प्रभु जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घं॥

श्री पुष्पदन्त नाथ का अर्घ

जल फल सकल मिलाय मनोहर, मन वच तन हुलसाय।
तुम पद पूजो प्रीति ल्याय के, जय जय त्रिभुवन राय॥
मेरी अरज सुनीजे, पुष्पदन्त जिनराय, मेरी अरज सुनीजे।
ओ ह्रीं श्री पुष्पदन्त नाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घं॥

श्री शीतलनाथ का अर्घ

शी फलादि वसु प्रासुक द्रव्य साजे, नाचे रचे मचत बज्जत सज्ज बाजे। रोगादि दोष मल मर्द्दन हेतु येवा। चर्चो पदाब्ज तव शीतल नाथ देवा॥

ओ ह्रों शीतलनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घं॥

श्री श्रेयांसनाथ का अर्घ

जल मलय तन्दुल सुमन चरू दीप धूप फलावती।
करि अरघ चरचो चरन जग प्रभू मोहि तार उतावली॥
श्रेयासनाथ जिनन्द त्रिभुवन वन्द आनन्द कन्द हैं।
दुख दन्द फन्द निकन्द पूरन चन्द जोति अमन्द है॥
ओं ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घं।

श्री वासपूज्य का अर्घ

जल फल दरब मिलाय गाय गुन, आठो अग नमाई।
शिव पद राजहेत हे श्रीपति, निकट धरो यह लाई ॥
वासु पूज वसु पूजत तुज पद, दासव सेवत आयी।
बाल ब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सन्मुख धायी ॥

ओ ह्रीं श्री वासु पूज्य जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ ॥

श्री विमलनाथ का अर्घ

आठो दरब संवार, मनसुख दायक पावने।
जजो अरघ भरथार, विमल विमल शिवतिय रमन ॥

ओं ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घं ॥

श्री अनन्तनाथ का अर्घ

शुचि नीर चन्दन शालि शन्दन सुमन चरू दीवा धरो।
अरू धूप जुत, अरघ करि ,कर जोग जुग विनती करो ॥
जगपूज परम पुनीत मति, अनत सन्त सुहावनो।
शिव कन्त जन्त महन्त ध्याओ, अन्त तत नशावनो ॥

ओ ह्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तते अर्घं ॥

श्री धर्मनाथ का अर्घ

आठों दरब साज शुचि चितहर, हरषि हरषि गुन गाई।
बाजत द्रम द्रम श्री मृदङ्ग गत, नाचत ता थेई थाई ॥
परम धरम-सम रमन धरम जिन अशरन निहारी।
पूजो पाय गाय गुन सुन्दर, नाचो दे दे तारी ॥

ओं ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घं ॥

श्री शान्तिनाथ का अर्घ

वसु द्रव्य सँवारी तुम ढिग धारी, आनन्द कारी दृग प्यारी।
तुम हो भवतारी, करुनाधारी, याते थारी शरनारी ॥
श्री शान्ति जिनेशं, नुनशक्रेश वृष चक्रेशं।
हनि अरि चक्रेशं, हे गुनधेश, दया मृतेश, मृक्रेशं ॥
ओ ह्रीं श्री शातिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घं ॥

श्री कुन्थुनाथ का अर्घ

जल चन्दन तन्दुल प्रसून चरु, दीप धूप लेरी।
जलजुत जजन करो मन सुख धरि, हरो जगत फेरी ॥
कुंथुसुन अरज दास केरी, नाथ सुन अरज दास केरी।
भव सिन्धु परयो हो नाथ, निकारो बाँह पकर मेरी ॥
ओ ह्रीं श्री कुंथनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घं ॥

श्री अरहनाथ का अर्घ

सुचि स्वच्छ पटीर, गन्ध गहीरं, तन्दुल शरीरं, पुष्प चरूँ।
वर दीप धूपं, आनन्द रूप लै फल भूप अर्घ करूँ ॥
प्रभु दीन दयालं, अरि कुल कालं विरद विशालं सुकुमालम।
हनि मम जंजालं, हे जगपालं, अरगुन मालंवर भालम ॥
ओं ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घं ॥

श्री मल्लिनाथ का अर्घ

जल फल अरघ मिलाय गाय पूजों भगति बढ़ाई।
शिव पद राज हेत हे श्रीधर, शरन गही मै आई ॥

राग दोष-पद मोह हरन को, तुम ही हो वर वीरा ।
याते शरन गही जगपति जी, बेग हरो भव पीरा ॥

ओ ह्री श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घं पद प्राप्तये अर्घं ॥

श्रीमुनि सुव्रतनाथ का अर्घ

जल गन्ध आदि मिलाय आठो, दरब अरघ सजो बरो ।
पूजो चरन-रज भगति जुत, जाते जगत सागर तरो ॥
शिव-साथ करत सनाथ सुव्रतनाथ, मुनि गुनि माल हैं ।
तसु चरन आनन्द भरन तारन, तरन विरद विशाल हैं ॥

ओ ह्री श्री मुनि सुव्रतनाथ तीर्थंकर जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घं ॥

श्री नमिनाथ का अर्घ

जल फलादि मिलाय मनोहर, अरघ धारत की भव भौं हर ।
जजतु हो नवि के गुन गायके, जुग पदाम्बुज प्रीति लगायके ॥

ॐ ह्री श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घं ॥

श्री नेमिनाथ का अर्घ

जल फल आदि साज शुचि लीने, आठो दरब मिलाय ।
अष्टम छिति के राज करन को, जजो अग बसुनाय ॥
दाना मोच्छ के, श्री नेमिनाथ जिनराय, दाता ॥

ॐ ह्री श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घं ॥

श्री पार्श्वनाथ का अर्घ

जल आदि साजि सब द्रव्य लियौ ।
कन थार वार नुति नृत्य कियौ ॥

सुख दाय पाप यह सेवत हौं।
प्रभु पार्श्वसार्श्वगुन वेवत हौं ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तय अर्घ ॥

श्री महावीर स्वामी का अर्घ

जल फल वसु सजि हिमथार, तनमन मोद धरो। गुण गाऊँ भवदधितार, पूजत पाप हरो ॥ श्री वीर महा अति वीर सन्मति नायक हो। जयवर्द्धमान गुन धीर समति दायक हो ॥

ॐ ह्रीं श्री वर्द्धमान जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घं ॥

निर्वाण क्षेत्र का अर्घ

जल गंध अच्छत फूल चरू फल, दीप धूपायन धरौं।
"द्यानत" करो निरभय जगत तें, जोर कर बिनती करौं ॥
सम्मेद गिर गिरिनार चंपा, पावापुरि कैलास कौं।
पूजो सदा चौवीस जिन निर्वाण भूमि निवास कौं ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विशति तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो अनर्घ निर्वपामीति स्वाहा अर्घ ॥

श्री पंच बालयति का अर्घ

सजि वसु विधि दरब मनोग, अर्घ बनावत हों।
वसु कर्म अनादि सजोग, ताहि नशावत हों ॥
श्री वासु पूज्य मल्लि नेमि, पारस वीर यति।
नमूं मन वच तन धरि प्रेम, पांचो बाल जती ॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ महावीरजी पंच बालयती तीर्थंकरेभ्यो अर्घं ॥

श्री सप्त ऋषि का अर्घ

जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप लावना ।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ॥
मन्वादि चारण ऋद्धि धारक- मुनिन की पूजा करूं ।
ता करे पातिक हरें सारे सकल आनन्द विस्तरूं ॥

ॐ ह्रीं श्रीमानु, सुरमनु, श्रीनिश्चय, सर्व सुन्दर, जय वान विनय लालस, जयमित्र सप्त ऋषिभ्यो अर्घ ॥

श्री कलिकुण्ड पार्श्व नाथ का अर्घ

जल गंध सुधारा तंदुल प्यारा पुष्प चरु ले दीप भली ।
दश धूप सुरंगी फल लेय अभंगी करो अर्घ उर हर्ष रली ॥
कलिकुण्ड सु यन्त्र पठकर मन्त्र ध्यावत जे भविजन ज्ञानी ।
सब विपति विनाशै, सुख परकाशै, होवै मङ्गल सुखदानी ॥

ॐ ह्रां श्री क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्डश्रीपार्श्वनाथाय धरणेन्द्र पद्मावती सेविताय ।

अतुल बलवीर्यपराक्रमाय सर्व विघ्नविनाशनाय,
हम्ल्व्यूं मल्व्यूं म्म्ल्व्यूं रम्ल्व्यूं भम्ल्व्यूं

पंच मेरु का अर्घ

आठ दरवमय अरघ बनाय, "द्यानत" पूजो श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पाँचों मेरु असी जिन धाम, सब प्रतिमाजी को करो प्रनाम ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धी जिन चैत्यालयस्थ जिन बिम्बेभ्यो अर्घं ॥

नन्दीश्वर द्वीप का अर्घ

यह अर्घ कियो निज हेतु, तुमको अरपत हों।
"द्यानत" कीनो शिव खेत, भूप समरपत हो॥
नन्दीश्वर श्री जिनधाम, बावन पूँज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द भावधरों॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर द्वीपे पूर्व दक्षिण पश्चिमोत्तरे द्विपंचाश जिनालयस्थ जिन प्रतिबिम्बेभ्यो अर्घं॥

सोलह कारण का अर्घ

जल फल आठें दरब चढ़ाय, "द्यानत" वरत करों मन लाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो॥
दर्शविशुद्धि भावना भाय सोलह तीर्थंकर पद दाय।
परम गुरू हो, जय जय नाथ परम गुरू हो॥

ॐ ह्रीं श्री दर्शन विशुद्धि, विनय सम्पन्नता, शील व्रतेष्व नतीचारी, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग, सवेग, शक्ति तस्त्याग तपस्वी। साधु-समाधि, वैयावृत्तिकरण, अर्हद्भक्ति, आचार्यभक्ति बहुश्रुत भक्ति, आवश्यका परिहाणी, मार्ग प्रभावना, प्रवचनवात्सल्येति, षोडश कारण भावनाभ्यो अर्घं॥

दश लक्षण अर्घ

आठो दरब सम्हार, "द्यानत" अधिक उछाह सों।
भव आताप निवार, दस लक्षण पूजूं सदा॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन, ब्रह्मचर्य, दश लक्षण धर्मेभ्यो नमः अर्घं।

रत्नत्रय का अर्घ

आठो दरव निरधार, उत्तम सों इत्तम लिये ।
जन्म रोग निरवार सम्यक रत्नत्रय भजो ॥

ॐ ह्रीं अष्टाग सम्यगृदर्शन, अष्ट विधि सम्यग्ज्ञान त्रयोदश प्रकारसम्यक्चारित्रेभ्यो अर्घं ।

(जिनवाणी) श्रीशास्त्रजी का अर्घं

वीर हिमाचल तैं निकरी गुरु गौतम के मुख कुण्ड ढरी है ।
मोह महाचल भेद चली, जग की जडता तप दूर करी है ॥
ज्ञान पयोनिधि माही रली, वहु भग तरङ्गनी सो उछरी है ।
ताशुटि शान्द गङ्गनदी, प्रति मैं अंजुलि कर शीश धरी है ॥
सकल विरोध विहंडनी, स्यादवाद युत जान ।
पुनः वाद मत खण्डनी, नमो देवि जिनवाणी ॥
जा वाणी के ज्ञान से, सूझे लोकालोक ।
सो वाणी जयवन्त नित, सदा देत हूं धोक ॥
उदक चन्दन तन्दुल पुष्पकै, चरु सुदीप सुधूप फयार्घकै ।
धवल मंगल गान रवाकुले, जिनगृहे जिन शास्त्र मह यजे ॥

ॐ ह्रा श्री प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग अनेक नय जिनवाणी मण्डितेभ्यो अर्घं ।

शान्ति पाठ भाषा

चौपाई

ान्तिनाथ मुख शशि उनहारी। शीलगुणवंतसंजमधारी ॥
खन एक सौ आठ विराजै। निरखत नयन कमल दल लाजैं ॥१

चमचक्रवर्तिपदधारी। शोलम तीर्थंकर सुखकारी ॥
न्द्रनरेन्द्रपूज्य जिननायक। नमौं शातिहित शातिविधायक ॥२

दिव्य विटप पहुपन की वरषा। दुन्दुभिआसन वाणी सरसा ॥
त्र चमर भामण्डल भारी। ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ॥३

ान्ति जिनेश शान्ति सुखदाई। जगतपूज्ज पूजौं सिर नाई ॥
रम शान्ति दीजे हम सबको। पढ़ै तिन्हैं, पुनि चार संघको ॥४

वसन्ततिलका

पूजैं जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके।
इन्द्रादिदेव, अरु पूज्ज पदाब्ज जाके ॥
सो शान्तिनाथ वरवसजगत्प्रदीप।
मेरे लिये करहिं शान्ति सदा अनूप ॥५

इन्द्रवज्रा—

पूजकों को प्रतिपालकों को, यतीन को औ यतिनायकों को।
जा प्रजा राष्ट्र सुदेश को ले, कीजे सुखी हे जिन शांति को दे ॥

स्रग्धरा—

होवै सारी प्रजा को सुख, बलयुत हो धर्मधारी नरेशा।
होवे वर्षा समय पर तिल भर न रहे व्याधियों का अन्देशा ॥

होवे चोरी न जारी, सुखमय वरते हो न दुष्काल भारी।
सारे ही देश धारैं जिनवर वृष-को, जो सदा सौख्यकारी ॥७

दोहा—घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवल राज।
शान्ति करैं सो जगत मे, वृषभादिक जिन राज ॥८

मन्दाक्रान्ता—

शास्त्रो का हो पठन सुखदा, लाभ सत्संगती का।
सद्वृत्तो के सुगुन कहके, दोष ढांकूँ सभी का ॥
बोलूँ प्यारे बचन हित के, आपको रूप ध्याऊँ।
तौलौं सेऊँ चरन जिनके, मोक्ष जौलौ न पाऊँ ॥९

तुम पद मेरे हिय में, ममहिय तेरे पुनीत चरणों मे।
तब लों लीन रहैं प्रभु, जबलों पाया न मुक्तिपद मैने ॥१०

अक्षरपद मात्रा से, दूषित जो कछु कहा गया मुझसे।
दया करो प्रभु सो सव, करुनाकरिपुनि छुडाहु भवदुखसो ॥११

हे जगबन्धु जिनेश्वर, पाऊँ तव चरणशरण बलिहारी।
मरणसमाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी ॥१२

(पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्)

विसर्जन

दोहा—बिन जाने वा जान के, रही टूट जो कोय।
तुम प्रसादतें परमगुरु, सो सब पूरन होय ॥१॥

पूजन विधि, जानो नही, नहि जानो आह्वान।
और विसर्जन हू नही, क्षमा करो भगवान ॥२॥

मन्त्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव ।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव ॥३॥

आये जो जो देवगन, पूजे भक्ति प्रमान ।
सो अब जावहु कृपा कर, अपने अपने थान ॥४॥

(इति पूजा समाप्तम्)

भजन

नाथ ! तोरी पूजा को फल पायो, मेरे यों निश्चय अब आयो ॥टेक॥ मेढक कमल पांखड़ी मुख मे, वीर जिनेश्वर धाओ। श्रेणिक गज के पगलत मूवो, तुरन्त स्वर्ग पद पाओ ॥नाथ०॥१॥ मैनासुन्दरी शुभमन सेती, सिद्ध चक्र गुण गायो। अपने पति को कोढ़ गमायो, गंधोदक फल पाओ ॥ नाथ० ॥२॥ अष्टपद में भरत नरेश्वर, आदिनाथ मन लायो। अष्टद्रव्य से पूजा प्रभुजी, अवधि हुलसायो ॥३॥ महिमा मोटी नाथ तुम्हारी, मुक्तिपुरी सुख पायो ॥ नाथ० ॥४॥ थकी थकी हारे सुर नर पति आगम सीख जितायो। 'देवेन्द्रकीर्ति' गुरु ज्ञान मनोहर पूजा ज्ञान बतायो ॥ नान० ॥५॥

भाषा स्तुति

तुम तरणतारण भवनिवारण भविकमन आनन्दनो।
श्रीनाभिनन्दन जगतवन्दन, आदिनाथ निरञ्जनो ॥१॥

तुम आदिनाश अनादि सेऊँ सेय पद पूजा करूँ ।
कैलाश गिरिपर रिषभजिनवर, पद कमल हिरदै धरूँ ॥२॥

तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली।
यह विरद सुनकर शरण आयो, कृपा कीज्यो नाथ जी ॥३॥

तुम चन्द्रवदन सु चन्द्रलच्छन, चन्द्रपुरी परमेश्वरो।
महासेननन्दन, जगतवन्दन, चन्दनाथ जिनेश्वरो ॥४॥

तुम शांति पाँच कल्याण पूजो, शुद्धमनवचकाय जु।
दुर्भिक्ष चोरी पापनशन, विघन जाय पलाय जु ॥५॥

तुम बालब्रह्म विवेक सागर, भव्यकमल विकाशनो।
श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥६॥

जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसेन्या वश करी।
चारित्र रथ चढि भये दूलह, जाय शिवरमणी वरी ॥७॥

कन्दर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मल कियो।
अश्वसेननन्दन जगतवन्दन, सकलसंघ मङ्गल कियो ॥८॥

जिनधरी बालकपेन दीक्षा, कमठमाण विदारकै।
श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र के पद, मैं नमो शिरधारकै ॥९॥

तुम कर्मघाता मोक्षदाता दीन जानि दया करो।
सिद्धार्थनन्दन जगतवन्दन, महावीर जिनेश्वरो ॥१०

छत्र तीन सोहैं, सुरनर मोहैं, बीनती अब धारिये।
करजोड़ि सेवक वीनवैं प्रभु, आवागमन निवारिये ॥११॥

अब होउ भव भव स्वामि मेरे मैं सदा सेवक रहौं।
कर जोड़ि यो वरदान माँगूँ, मोक्षफल जावत लहौं ॥१२॥

जो एक माही एक राजै, एक माहि अनेकनो।
इक अनेककी नहीं संख्या, नमूँ सिद्ध निरञ्जनो ॥१३॥

चौ०–मै तुम चरणकमलगुणगाय। बहुविधि भक्ति करी मनलाय।
जनम जनम प्रभु पाऊँ तोहि। यह सेवाफल दीजै मोहि ॥१४॥

कृपा तिहारी ऐसी होय। जामन मरन मिटावो मोय ॥
बारबार मै विनती करूँ। तुम सेयाँ भवसागर तरूँ ॥१५॥

नाम लेत सब दुःख मिटजाय। तुम दर्शन देख्यो प्रभु आय।
तुम हो प्रभु देवन के देव। मै तो करूँ चरण तब सेव ॥१६॥

जिन पूजा तै सब सुख होय। जिन पूजा सम अवर न कोय ॥
जिन पूजा तैं स्वर्ग विमान। अनुक्रम तै पावै निर्वाण ॥१७॥

मैं आयो पूजन के काज। मेरो जन्म सफल भयो आज।
पूजा करके नवाऊँ शीश। मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥१८॥

दोहा—सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान।
मो गरीब की वीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥१९॥

पूजन करते देवकी, आदि मध्य अवसान
सुरगनके सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥२०॥

जैसी महिमा तुमविषै, और धरै नहिं कोय।
जो सूरज मे जाति है, नहिं तारागण माय ॥२१॥

नाथ तिहारे नामतै, अघ छिनमाँहि पलाय।
ज्यो दिनकर परकाशतै, अन्धकार विनशाय ॥२२॥

बहुत प्रशंसा क्या करूं मै प्रभु बहुत अजान।
पूजाविधि जानूं नही, सरन राखि भगवान ॥२८॥

इति भाषा स्तुति

शास्त्र का मंगलाचरण

ओं नमः सिद्धेभ्यः

ओंकारं बिन्दुसंयुक्तम् नित्य ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षद चैव ओंकाराय नमो नमः ॥ १ ॥

अविरलशब्दघनौघा प्रक्षालितसकलभूतलमलकलङ्का ।
मुनिभिरुपासिततीर्था सरस्वती हरत नो दुरितान् ॥२॥

अज्ञानतिमिरांधानां ज्ञानांजनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥

परमगुरुवे नम. परम्पराचार्य श्रीगुरुवे नम ।
सकलकलुषविध्वसक श्रेयसा परिबर्द्धकं ।
धर्म्मसबधक भव्यजीवमन. प्रतिबोधकारकमिशास्त्र ॥१॥

१ – नामधेय एतन्मूलग्रन्थकर्तार: श्रीसर्वज्ञदेवातदुत्तर-
ग्रन्थकर्तार; श्रीगणधरदेवाः प्रतिगणधरदेवास्तेषां ।
वचोनुसारमासद्य श्री २ ····· विरचित ॥२॥

मंगल भगवान् वीरो मगलं गौतमो गणी ।
मगलं कुन्दकुन्दाद्यो जैन धर्मोस्तु मङ्गलम् ॥३॥

वर्वे श्रोतार: सावधानतया शृण्वन्तु ॥

१—जिस शास्त्र का स्वाध्याय कर रहे हो उसका नाम बोलना चाहिये ।

२—ग्रन्थ कर्ता का नाम बोलना चाहिये ।

सामायिक क्यों और कैसे

दोहा—समता सुधा को पान कर, शुद्ध बुद्ध अविकार।
ध्यान मगन हो आत्मा, सामायिक उर धार॥

प्रत्येक गृहस्थ अपना सभी समय खाद्य सामिग्री के उपार्जन मे लगा देता है। उपार्जन-क्रिया द्वारा हेय उपादेय को न विचारता हुआ केवल धन-सकलन करना ही ध्येय बन जाता है। फलतः समय पाय पूर्व सचित पुण्य क्षय होते २ शरीर आयु का अन्त प्राप्त कर दुर्गति को चला जाता है। इसलिये बुद्धिमान भव्य जीव, पहिले पुण्य के भोग अवस्था (गृहस्थ) में ही आगामी के सुख-साधन को जुटाना प्रारम्भ कर देता है और उसका सामायिक एक असाधारण कारण है, क्योंकि सामायिक के द्वारा ही आत्मा व परमात्मा का स्वरूप झलकने लगता है। अपने द्वारा की गई दूसरे की अनिष्ट रूप पाप-क्रिया स्वयं भासने लगती है और पुनः उससे बचने व प्रायश्चित करने के रूप भाव पैदा होते हैं। आत्मा मे शान्ति का श्रोत बहने लगता है। जिनेन्द्र भगवान के गुण गायन आदि मे श्रद्धा पैदा हो जाती है।

प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त मे सूर्योदय से १ घन्टा पहिले शय्यासन से प्रसन्न मन उठे। स्त्री सहवास मल-मूत्रादि से यदि अपवित्र हो रहा हो तो हाथ पैर जल से शुद्ध कर वस्त्र परिवर्तन कर दर्भासन चटाई काष्ठ पटड़ा या साफ चबूतरा आदि स्थान पर पूर्वमुख कर पैर की एड़ी मिला अंगूठे से अंगूठे का चार अंगुल का अन्तर कर नासाग्र दृष्टी रख ९ वार णमोकार मन्त्र का उच्चारण करें और दोनों हाथ जोड़ (जुडे हुए हाथों को) सीधे हाथ की तरफ चक्र रूप घुमाते हुए तीन आवर्त करें। जुड़े हुए हाथो पर मस्तक

रक्खे (शिरोन्नति करे) पश्चात् दक्षिण दिशा में मुंह कर पूर्ववत् क्रिया करे, पुन. पश्चिम व उत्तर मे भी क्रमशः वैसा ही करे ।

सामायक पाठ मे—१ प्रतिक्रमण भगवान का अपने निकट करते हुए पूर्व मे अपने द्वारा किए हुए दोषो को स्मरण करना । २ प्रत्याख्यान—किये हुए दोषो से छूटने के अर्थ प्रभु से प्रार्थना करे, मेरे वे दोष मिथ्या हो । ३ सामायिक-ससार के सभी प्राणियो (शुभ वा अशुभ रूप पदार्थों) मे समता भाव धारण कर अपने किये दोषों की क्षमा मांगना । ४ स्तवन-भूत भविष्यत वर्तमान २४ तीर्थंकर बीस विरहमान का गुन-गायन स्तवन करना । ५ वन्दना—अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी की भक्ती पूर्वक स्तुति करते हुए बन्दना नमस्कार करना ६ कायोत्सर्ग—सामायिक प्रारम्भ के समय जो चारो दिशा मे वा ३ णमोकार मन्त्र, ३ आवर्त, १ शिरोन्नति एक एक दिश में को थी वैसे ही करते हुए सामायिक समाप्त करें । दर्श प्रतिमाधारी को प्रात.काल एक समय, दूसरी व्रत प्रतिमाधार को प्रातः सायंकाल दो समय, तीसरी सामयिक प्रतिमाधार को प्रात काल दोपहर सायकाल तीन समय कम से कम २- घडी यानी १ मुहूर्त (४८ मिनट) है। मध्यम ४-४ घड उत्तम ६-६ घडी ये नियमा प्रतिमाधारी श्रावक के लिये हैं

नोट—तीन आवर्त का यहां अभिप्राय मन, वचन, का की एकाग्रता शिरोन्नति के नमस्कार से है । चारो दिशाओ यहां अभिप्राय सभी दिशाओ के तीर्थ क्षेत्र कृत्रिम अकृत्रि चैत्यालय मुनिराज आदि को परोक्ष नमस्कार करने का है ।

समय पूरा करने के लिये अपना उपयोग आलोचना, पाठ, सामायिक पाठ भाषा व संस्कृत वैराग्य भावना, बारह भावना आदि पाठ आनन्द-मगन होता हुआ पढे। कण्ठस्थ याद न हो तो पुस्तक के आधार से पढे।

साधारण श्रावक के लिये समय की पाबन्दी नहीं है। जितना सुभीता समय मिले प्रातःकाल शरीर शुद्धि कर ध्यान चितवन अवश्य करें।

+—— +

आलोचना पाठ

दोहा—वंदो पांचो रमगुरु, चौबीसो जिनराज।
करू शुद्ध आलोचना, शुद्धकरन के काज ॥१

सखी छन्द चौदह मात्रा

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी।
तिनकी अब निवृत्ति काज, तुम शरण लही जिनराज ॥२

इक वे तेचउ इन्द्री वा, मनरहित सहित जे जीवा।
तिनकी नही करुणा धारी, निरदई ह्वे घात विचारी ॥३

समरंभ समारम्भ आरम्भ, मनवचतन कीने प्रारम्भ।
कृत कारित मोदन करिकैं, क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं ॥४

शत आठ जु इमि भेदनतैं, अघ कीने परछेदनतैं।
तिनकी कहुँ कोलों कहानी, तुम जानत केवल ज्ञानी ॥५

विपरीत एकांत विनय के, संशय अज्ञान कुनय के।
वश होय घोर अघ कीने, वचतें नहि जाय कहीने ॥६

कुगुरुन की सेवा कीनी, केवल अदयाकरि भीनी।
या विधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुँगत मधि दोष उपायो ॥७

हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, परवनितासों दृग जोरी ।
आरम्भ परिग्रह भीनो, पनपाप जु या विधि कीनो ॥८

सपरस रसना घ्राननको, दृग कान विषय सेवन को ।
बहु कर्म किये मनमानी, कछु न्याय अन्याय न जानी ॥९

फल पंच उदंबर खाये, मधु मास मद्य चितचाहे ।
नहि अष्टमूलगुणधारी, विषयन सेये दुखकारी ॥१०

दुइबीस अभख जिनगाये, सो भी निशिदिन भुंजाये ।
कुछ भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों करि उदर भरायो ॥११

अनंतानु बधी सो जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो ।
सज्वलन चौकड़ी गुनिये, सब भेद जु षोडश मुनिये ॥१२

परिहास अरति रति सोग, भय ग्लानि तिवेद सजोग ।
पनवीस जु भेद भये मे, इनके वश पाप किये हम ॥१३

निद्रावस शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई ।
फिर जागि विषयवन धायो, नानाविधि विषफल खायो ॥१४

किये आहार निहार विहारा, इनमें नहि जतन विचारा ।
बिन देखी धरी ऊठाई, विन शोधी वस्तु जु खाई ॥ १५

तब ही परमाद सतायो, बहुविधि विकलप उपजायो ।
कछु सुधिबुधि नाहि रही है, मिथ्यामति छाय गई है ॥१६

मरजादा तुम ढिग लीनी, ताहू मे दोष जु कीनी ।
भिन्न भिन्न अब कैसे कहिये, तुम ज्ञानविषैं सब पइये ॥१७

हा हा ! मै दुठ अपराधो, त्रपजीवनराशि विराजी ।
थावरकी जतन न कीनी, उर मे करुणा नहि लीनी ॥१८

पृथवी बहु खोद कराई, महलादिक जागां चिनाई ।
पुनि बिनगाल्यो जल ढोल्यो, पखाते पवन विलोल्यो ॥१६

हा हा मैं अदयाचारी बहु हरितकाय जु विदारी ।
तामधि जावन के खन्दा हम खाये धरि आनन्दा ॥२०

हा हा । परमाद बसाइ बिन देखे अगनि जलाइ ।
तामधि जे जीव जु आये, ते हूः परलोक सिधाये ॥२१

बीध्यौ अतिराति पिसायो, ईंधन बिन सोधि जलायो ।
झाडू ले जागा बुहारी, चिटी आदिक जीव विदारी ॥२२

जल छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी ।
नहि जलथानक पहुँचाई, किरिया बिन पाप उपाई ॥२३

जल मल मोरिन गिरवायो, कृमिकुल बहु घात करायो ।
नदियन बिच चीर धुवाये, कोन के जीव मराये ॥ २४

अन्नादिक शोध कराई, ता मे जो जीव निसराई ।
तिनका नहि जतन कराया, गलियारे धूप डराया ॥ २५

पुनि द्रव्य कमावन काजे, बहु आरम्भ हिंसा साजे ।
कीये तिसनावस भारी, करना नहि रञ्ज विचारी ॥२६

ताको जु उदय अब आयो, नाना विधि मोहि सतायो ।
फल भुञ्जत जिय दुख पावै, बचनैं कैसे करि गावै ॥२७

तुम जानत केवलज्ञानी, दुख, दूर करो शिवथानी ।
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारनविरद सही है ॥२८

जो गांवपती इन होवै, सो भी दुखिया दुख खोवै।
तुम तीन भुवन के स्वामी, दुख मेटहु अन्तरजामी ॥२६

द्रोपदिको चीर बढायो, सीता प्रति कमल रचायो।
अन्जन से किये अकामी, दुख मेट्यो अन्तरजामी ॥३०

मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपनो विरद निहारो।
सब दोषरहित करि स्वामी, दुख मेटहु अन्तरजामी ॥३१

इन्द्रादिक पदमी न चाहूँ, विषयनि मे नाहिं लुभाऊँ।
रागादिक दोष हरीजै, परमातम निजपद दीजे ॥३२

दोहा—दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दीज्यो मोय।
सब जीवन के सुख बढै, आनन्द मङ्गल होय ॥

अनुभव माणिक पारखी, 'जौहरी' आप जिनद।
ये ही वर मोहिं दीजिये, चरण शरण आनंद ॥ इति

भाषा सामायिक पाठ

अथ प्रथम प्रतिक्रमण कर्म

काज अनन्त भ्रम्यो जग मे सह्यो दुख भारी। जन्म-मरण नित किये पाप को ह्वै अधिकारी ॥ कोटि भवांतरमाहि मिलन दुर्लभ सामायिक। धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुखदायक ॥१॥ हे सर्वज्ञ जिनेश ! किये जे पाप जु मैं अब। ते सब मनवचकाय योग की गुप्ति बिना लभ ॥ आप समीप हजूरमाहि मैं खड़ो-खडो सब। दोष कहू सो सुनो करो नठ दुःख देहि जब ॥२॥ क्रोध मान मद लोभ मोह मायावशि

प्रानी । दु:ख सहित जे किये दया तिनको नहिं आनी ॥ बिना प्रयोजन एकेन्द्रिय बिति चउ पचेन्द्रिय । आप प्रसादहि मिटै दोष जो लाग्यो मोहि जिय ॥३॥ आपस मे इक ठौर थापि करि जे दु:ख दीने। पेलि दिये पगतले दावकरि प्राण हरीने ॥ आप जगत के जीव जिते तिन सबके नायक । अरज करौं मैं सुनो दोष मेटो सुखदायक ॥४॥ अञ्जन आदिक चोर महा घनघोर पाप मय । तिनके जे अपराध भये ते क्षमा-क्षमा किय ॥ मेरे जे अब दोष भये ते क्षमो दयानिधि। यह पडिकोणो कियो आदि षटकर्म माहिं विधि ॥५॥

अथ द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म

जो प्रमादवशि होय विराधे जीव घनेरे । तिनको जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे ॥ सो सब झूँठो होउ जगतपति के परसादे। जो प्रसादतै मिले सर्व सुख दु:ख न लाधे ॥ ६ ॥ मैं पापी निर्लज्ज दयाकरि हीन महाशठ । किये पाप अति घोर पापमति होय चित दुठ ॥ निंदू हूँ मैं बारबार निज जियको गरहूँ। सब विध धर्म उपाय पाय फिर पापहि करहूँ ॥ ७ ॥ दुर्लभ है नर जन्म तथा श्रावक कुल भारी । सतसङ्गति संयोग धर्म निज श्रद्धाधारी । जिन वचनामृतधार समावतै जिन वानी । तौहू जीव संहारे धिक धिक धिक हम जानी ॥ ८ ॥ इन्द्रिय-लम्पट होय खोय जिन ज्ञानजमा सब। अज्ञानी जिम करै तिसि विधि हिंसक ह्वै अब ॥ गमनागमन करंतो जीव विराधे भोले । ते सब दोष किये निंदूं अब मनवच तोले ॥ ९ ॥ आलोचन-विषयको दोष लागे जु घनेरे । ते सब दोष विनाश होउ तुमतैं जिन मेरे ॥ बार-बार इस भांति मोह मद दोष कुटिलता। ईर्षादिकतैं भये निंदिये जे भयभीता ॥ १० ॥

अथ तृतीय सामायिक कर्म

सब जीवन मे मेरे समताभाव जग्यो है। सब जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो है॥ आर्त्तरौद्र द्वय ध्यान छांडि करिहूँ सामायक। संयम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायक ॥ ११ ॥ पृथिवी जल अरु अग्नि वायु चउ काय वनस्पति। पञ्चहि थावरमाहि तथा त्रस जीव बसै जिय ॥ वे इन्द्रिय तिय चउ पञ्चेन्द्रियमाहि जीव सब। तिनतै क्षमा कराऊँ मुझ पर क्षमा करो अब ॥ १२ ॥ इस अवसर मे मेरे सब सम कञ्चन अरु तृण। महल मसान समान शत्रु अरु मित्र हि सम गण ॥ जामन मरण समान जानि हम समता कीनी। सामायिक का काल जितै यह भाव नवीनी ॥ १३ ॥ मेरो है इक आतम तामै ममत जु कीनो। और सबै मम भिन्न जानि मो समतारस भीनो ॥ मात पिता सुत बन्धु मित्र तिय आदि सबै यह। मोतै न्यारे जानि जथारथरूप करयो गह ॥ १४ ॥ मैं अनादि जग-जालमाहि फँसि रूप न जाण्यो। एकेन्द्रिय दे आदि जन्तुको प्राण हराण्यो ॥ ते अब जीवसमूह सुनो मेरी यह अरजी। भवभवको अपराध क्षमा कीज्यो करि मरजी ॥ १५ ॥

अथ चतुर्थ स्तवन कर्म

नमूँ ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीते कर्मको। सम्भव भवदुखहरण करण अभिनन्दन शर्मको ॥ सुमति सुमतिदातार तार भवसिंधु पारकर। पद्मप्रभ पद्माभ भानि भवभीति प्रीतिधर ॥ १६ ॥ श्रीसुपार्श्व कृत पास नाश भव जास शुद्धकर। श्रीचन्द्रप्रभ चन्द्रकांति सम देहकांति धर ॥ पुष्पदंत दमि दोषकोश भवि पोष

रोपहर। शीतल शीतल करन हरन भवताप दोपहर ॥ १७ ॥
धेयरूप जिन श्रेय ध्येय नित सेय भव्यजन। वासुपूज्य शतपूज्य धामवादिक भवभय हन ॥ विमल विमलमतिदेन अन्तगत हैं अनन्त जिन। धर्म शर्म शिवकरन शांति जिन शांतिविधायिन ॥ १८ ॥ कुन्थ कुन्थ मुखजीवपाल अरनाथ जाल हर। मल्लि मल्लसम मोहमल्ल मारन प्रचार धर ॥ मुनिसुव्रत व्रतकरण नमत सुरसङ्घहि नमि जिन। नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथ माँहि ज्ञान धन ॥ १९ ॥ पार्श्वनाथ जिन पार्श्वउपलसम मोक्षरमापति। वर्द्धमान जिन नमूं वमूं भवदुःख कर्मकृत ॥ या विध मैं जिन सङ्घ रूप चउवीस सङ्ख्यधर। स्तवूं नमूं हूं बार बार बन्दौं शिव सुख कर ॥ २० ॥

अथ पंचम वन्दना कर्म

वन्दूं मैं जिनवीर धीर महावीर सु सन्मति। वर्द्धमान अति वीर वन्दि हो मनवचतनकृत ॥ त्रिशलातनुज महेश धीश विद्यापति वन्दूं। वन्दूं नितप्रति कनकरूप तनु पाप निकन्दूं ॥ २१ ॥
सिद्धारथ नृपनन्द द्वन्द दुख दोष मिटावन। दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जगजीव उधारन ॥ कुण्डलपुर करि जन्म जगत-जिय आनन्दकरन। वर्ष बहत्तरि आयु पाय सब ही दुख टारन ॥ २२ ॥ सप्त हस्त तनु तुङ्ग भङ्ग कृत जन्म मरण भय। बाल-ब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय ॥ दे उपदेश उधारि तारि भवसिंधु जीवघन। आप बसे शिवमाहिं ताहि वन्दौं मनवचतन ॥ २३ ॥
जाके वन्दनथकी दोष दुख दूरहि जावै। जाके वन्दनथकी मुक्ति तिय सन्मुख आवै ॥ जाके वन्दनथकी वन्द्य होवैं सुरगनके। ऐसे वीर जिनेश वन्दिहूं क्रमयुग तिनके ॥ २४ ॥ सामायिक षटकर्ममाहिं वंदन यह पंचम। वंदे वीरजिनेंद्र इन्द्रशतवंद्य वंद्य मम ॥ जन्म

भरण भय हरो करो अघ शांत शातिमय। मैं अवकाश सुपोष दोषको दोष विनाशय ॥ २५ ॥

अथ छट्टा कायोत्सर्गकर्म

कायोत्सर्ग विधान करूं अन्तिम सुखदाई। काय त्यजनमय होय काय सबको दुखदाई ॥ पूरव दक्षिण नमूं दिशा पश्चिम उत्तर मैं। जिनगृह वंदन करूं हरूं भव पापतिमिर मैं ॥ २६ ॥ शिरोनती मैं करूं नमूं मस्तक कर धरिकैं। आवर्त्तादिक क्रिया करूं मनवचमदहरिकें ॥ तीन लोक जिनभवनमाहि जिन हैं जु अकृत्रिम। कृत्रिम हैं द्वयअर्द्धद्वीपमाहि वन्दौं जिम ॥ २७ ॥ आठकोडिपरि छप्पन लाख जु सहस सत्याणूं। चारि शतकपरि असी एक जिनमन्दिर जाणूं ॥ व्यंतर ज्योतिषमाहि सख्य रहिते जिनमन्दिर। जिनगृह वंदन करूं हरहु मम पाप संघकर ॥ २८ ॥ सामायिक सम नाहि और कोउ वैर मिटायक। सामायिक सम नाहि और कोउ मैत्रीदायक ॥ श्रावक अणुव्रत आदि अन्त सप्तम गुणथानक। यह आवश्यक किये होय निश्चय दुखहानक ॥ २९ ॥ जे भवि आतम काज करण उद्यम के धारी। ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी ॥ राग दोष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब। बुध 'महाचन्द्र' विलाय जाय ताते कीज्यो अब ॥ ३० ॥

इति सामायिक भाषापाठ समाप्त।

मेरी भावना

जिसने रागद्वेष कामादिक, जीते सब जग जान लिया :
सब जीवो को मोक्षमार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया ॥
बुद्ध, वीर, शिव गोड खुदा, हरि, या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति-भाव से प्रेरित हो यह, चित उसी में लीन रहो ॥१

विषयों की आशा नहिं जिनके, साम्य-भाव धन रखते हैं।
निज परके हित साधन मे जो, निशदिन तत्पर रहते है ॥
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुख समूह को हरते हैं ॥२
रहें सदा सत्संग उन्ही का, ध्यान उन्ही का नित्य रहे।
उनही जैसी चर्या मे यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे ॥
नही सताऊँ किसी जीव को, झूँठ कभी नही कहा करूँ।
परधन वनिता पर न लुभाऊँ, सन्तोषामृत पिया करूँ ॥३
अहंकार का भाव न रक्खूँ, नही किसी पर क्रोध करूँ।
देख दूसरो की बढ़ती को, कभी न ईर्ष्या भाव धरूँ ॥
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करूँ।
बने जहाँ तक इस जीवन मे, औरों का उपकार करूँ ॥४
मैत्रीभाव जगत मे मेरा, सब जीवो से नित्य रहे।
दीन दुखी जीवो पर मेरे, उर से करुणा स्रोत बहे ॥
दुर्जन क्रूर-कुमार्ग रतो पर, क्षोभ नही मुझको आवे।
साम्यभाव रक्खूँ मै उन पर, ऐसी परणति हो जावे ॥ ५
गुणीजनो को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहाँ तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे ॥
होऊँ नही कृतघ्न कभी मै, द्रोह न मेरे उर आवे।
गुण ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषो पर जावे ॥
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे।
लाखो वर्षो तक जीऊँ या, मृत्यु आज ही आजावे ॥६
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे ॥७
होकर सुख मे मग्न न फूले, दुख मे कभी न घबरावे।
पर्वत नदी श्मशान भयानक, अटवी से नहिं भय खावे ॥

रहै अडोल-अकम्प निरन्तर, यह मन दृढतर बन जावे।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग मे, सहनशीलता दिखलावे ॥८

सुखी रहैं सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे।
बैर-पाप अभिमान छोड जग, नित्य नये मङ्गल गावे ॥
घर घर चर्चा रहै धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावे।
ज्ञान-चरित्र उन्नत कर अपना, मनुज जन्मफल सब पावे ॥९

ईति-भीति व्यापे नहिं जग मे वृष्टि समय पर हुआ करे।
धर्म-निष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे।
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे।
परम अहिंसा धर्म जगत में फैला सर्वहित किया करे ॥१०

फैले प्रेम परस्पर जग मे, मोह दूर पर रहा करे।
अप्रिय-कटुक-कठोर शब्द नहिं, कोई मुख से कहा करे ॥
बनकर सब 'युग-वीर', हृदय से, देशोन्नति रहा करे।
वस्तु स्वरूप विचार खुशी से, सब दुख सकट सहा करे ॥११

—+-—

जैन आरती संग्रह

जैन आरती, भजन नं० १

ॐ जय अन्तरयामी, स्वामी जय अन्तरयामी।
दुखहारी सुखकारी, त्रिभुवन के स्वामी ॥ जय० टेक
नाथ निरञ्जन सब भंजन, सन्तन आधारा।
पाप निकंदन भविजन, सम्पति दातारा ॥ जय० १

करुणा सिन्धु दयानिधि, जय जय गुणधारी।
वांछित पूरण श्री जिन, सब जन सुख कारी ॥ जय० २

ज्ञान प्रकाशी शिवपुरी वासी, अविनाशी अविकार।
अलख अगोचर शिव मय रमणी भरतार ॥ जय० ३

विमल कुलारक कल मल हारक, तुम हो दीन दयाल।
जय जय कारक तारक, षट् जीवन रिक्षपाल ॥ जय० ४

'न्यामत' गुण गावे पाप नशावे, चरण शिर नावे।
पुनि पुनि अरज सुनावे, शिव कमला पावे ॥ जय० ६

भजन नं० २

आरती महावीर स्वामी (चाल—जय जगदीश हरे)

ॐ जय सम्मति देवा, स्वामी जय सम्मति देवा।
वीर महा अति वीर प्रभु जी, वर्द्धमान् देवा ॥ टेक

त्रिशला उर अवतार लिया प्रभु, सुन नर हर्षाये।
पन्द्रह मास रतन कुण्डलपुर, धनपति वर्षाये ॥ १

शुकल त्रयोदशी चैत्र मास की, आनन्द करतारी।
राय सिद्धारथ घर जन्मोत्सव, ठाठ रचे भारी ॥२

तीन वर्ष लो रहे गृह मे, बन कर ब्रह्मचारी।
राज त्याग कर भर जीवन मे, मुनि दीक्षा धारी ॥ ३

द्वादश वर्ष किया तप दुद्धर, विधि चक चूर किया।
झलके लोकालोक ज्ञान मे, सुख भर पूर लिया ॥ ४

कातिक श्याम अमावस के दिन, जाकर मोक्ष बसे।
पर्व दिवाली चला तभी से, घर घर दीप जले ॥ ५

वीत राग सर्वज्ञ हितैषी, शिव मग परकाशी।
हरिहर ब्रह्मनाथ तुम्ही हो, जय जय अविनाशी ॥ ६

दीन दयाला जग के प्रतिपाला, सुर नर नाथ जजैं।

'सुमरत विघ्न टरैं इक छिन में, पातक दूर भजें ॥ ७
चोर भील चाण्डाल उधारे, भव दुख हरण तुही।
पतित जान 'शिवराम, उबारो, है जिन शरण गही ॥८

भजन नं० ३

आरती पच कल्याणक

आरती श्री जिनराज चरण की,
गुण छयालीस ठारह दोप हरण की ॥ टेक
पहली आरती गर्भ पूर्ण की,
पन्द्रह मास रतन वर्षन की ॥ आ० १
दूसरी आरती जन्म करन की,
मति श्रुति अवधि सुज्ञान पुराण की ॥ आ० २
तीसरी आरती तपो चरण की,
पंच मुष्टिका लौच करन की ॥ आ० ३
चौथी आरती केवल ज्ञान परण की,
समोशरण धनपति चरनन की ॥ आ० ४
पाँचवी आरती मोक्ष गमन की,
सुरनर मिल उछाह करन की ॥ आ० ५
जो यह आरती करे करावे,
'द्यानत' मन वाछित सुख पावे ॥ आ०

भजन न० ४

आरती पार्श्वनाथ भगवान की

जय पारस, जय पारस, जय पारस देवा ॥ टेक

मात तुम्हारी वामा देवी, पिता अश्व सेवा।
काशी जी मे जन्म लिया था, हो देवों के देवा ॥ १

आप तेईसवें हो तीर्थंकर, भक्तो को सुख देवा।
पाँच पाप मिटाकर हमरे शरण देवो जिन देवा ॥ २

दूजा और कोई न दीखे, जो पार लगावे सेवा।
'नवयुवक मंडल' बना रहे, जो करे आपकी सेवा ॥ ३

भजन नं० ५

आरती

यह विधि मंगल आरति कीजे,
पञ्च परम पद भज सुख लीजे ॥टेक

प्रथम आरति श्री जिन राजा,
भवदधि पार उतार जिहाजा ॥ यह०

दूजी आरति सिद्धन केरी,
सुमरत करत मिटे भव फेरी ॥ यह०

तीजी आरति सूर मुनिन्दा,
जनम मरण दुख दूर करिन्दा ॥ यह०

चौथी आरति श्री उवज्झाया,
दर्शन करत पाप पलाया ॥ यह०

पाँचवी आरति साधु तुम्हारी,
कुमति विनाशन शिव अधिकारी ॥ यह०

छट्ठी ग्यारह प्रतिमा धारी,
श्रावक वन्दूं आनन्दकारी ॥ यह०

सातवीं आरति श्री जिन वाणी
"द्यानत" स्वर्ग मुक्ति सुखदानी ॥ यह०

भजन नं० ६

अरहन्त आरती

आरात श्री जिन राज तुम्हारी,
करम दलन सन्तन हितकारी ॥

सुर नर असुर करत सब सेवा,
तुम ही सब देवन के देवा ॥ आ०

पञ्च महाव्रत दुद्धर धारे,
रागद्वेष परिणाम विडारे ॥ आ०

भव भय भीत शरण जे आये,
ते परमारथ पन्थ लगाये ॥ आ०

तम गुण हम कैसे करि गावे,
गणधर कहत पार नहि पावे ॥ आ०

करुणा सागर करुणा कीजे,
"द्यानत" सेवक को सुख दीजै ॥ आ०

भजन नं ७

मुनिराज आरती

आरति कीजै श्री मुनिराज की,
अधम उधारन आतम काज की ॥टेक॥आ०

जा लक्ष्मी के सब अभिलाषी,
सो साधन करदमवत नाखी ॥ आ०

सब जग जीत लियो जिन नारी,
सो साधन नागिन वत छारी ॥ आ०

विषयन सब जग जीत वश कीने,
ते साधन विषवत तज दीने ॥ आ०

भुवि को राज चहत सब प्राणी,
जीरण तृण वत त्यागत ध्यानी ॥ आ०

शत्रु मित्र सुख दुख सम मानै,
लाभ अलाभ बराबर जानै ॥ आ०

छहो काय पीहर व्रत धारें,
सब को आप समान निहारें ॥ आ०

इह आरति पढै जो गावै,
"द्यानत" सुरग मुकति सुख पावै ॥ आ०

भजन नं० ८

जिनवाणी माता की आरती

जय अम्बे वाणी, माता जय अम्बे वाणी,
तुमको निशदिन ध्यावत, सुर नर मुनि ज्ञानी ॥टेक

श्री जिन गिरते निकसी, गुरु गौतम वाणी,
जीवन भ्रम तम नाशन दीपक दरशाणी ॥ जय

कुमत कुलाचल चूरण, बज्र सु सरधानी,
नव वियोग निपेक्षण, देखन दरयाणी ॥ जय०

पातक पङ्क पखालन, पुण्य परम वाणी,
मोह महार्णव डूबत, तारण नौकाणी ॥ जय०

लोकालोक निहारण, दिव्य नेत्र स्थानी,
जिन पर भेद दिखावन सूरज किरणानी ॥ जय०

श्रावक मुनि गण जननी, तुम ही गुण खानी,
"सेवक" लख सुख दायक पावन परमाणी ॥ जय०

आत्म कीर्तन

हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम ।
ज्ञाता दृष्टा आतम राम ।। टेक ।।

मै वह हूँ जो हैं भगवान ।
जो मै हूं वह है भगवान ।
अन्तर यही ऊपरी जान ।
वे विराग यहँ राग वितान ।।१।।

मम स्वरूप है सिद्ध समान ।
अमित शक्ति सुख ज्ञान निधान ।
किन्तु आश वश खोया ज्ञान ।
बना भिखारी निपट अजान ।।२।।

सुख दुख दाता कोई न आन ।
मोह राग रुष दुःख की खान ।
निज को निज परको पर जान ।
फिर दुःख का नही लेश निदान ।।३।।

जिन शिव ईश्वर ब्रह्मा राम ।
विष्णु बुद्ध हरि जिसके नाम ।।
राग त्याग पहुँचू निज धाम ।
आकुलता का फिर क्या काम ।।४।।

होता स्वयं जगत परिणाम ।
मैं जग का करता क्या काम ।।
दूर हटो परकृत परिणाम ।
सहजानंद रहूँ अभिराम ।। ५ ।।